“तिरुमल क्षेत्र दर्शिनी” ग्रंथमाला

तिरुचानूर क्षेत्र

(अलमेलुमंगपट्टणम् की महिमा - उत्सव)

हिन्दी अनुवाद

डॉ. के. यस. इन्दिरा

तेलुगु मूल

जूलकन्टि बालसुब्रह्मण्यम्

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्

तिरुपति

2018

TIRUCHANUR KSHETRA

Hindi Translation
Dr. K. S. Indira

Telugu Original
Julakanti Bala Subrahmanyam

T.T.D. Religious Publications Series No. 1284

First Edition - 2018

Copies : 1000

Published by
Sri Anil Kumar Singhal, I.A.S.,
Executive Officer,
Tirumala Tirupati Devasthanams,
Tirupati.

D.T.P:
Publications Division
T.T.D, Tirupati.

Printed at :
Tirumala Tirupati Devasthanams Press,
Tirupati.

प्राक्कथन

''वेङ्कटाद्रि समं स्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति किञ्चन ।
वेङ्कटेश समो देवो न भूतो न भविष्यति'' ।।

भाव यह है कि इस ब्रह्माण्ड में वेंकटाद्रि समान अन्य कोई क्षेत्र नहीं है, वेङ्कटेश्वर समान अन्य कोई भगवान नहीं है, नहीं होंगे भी।

कलियुग वैकुण्ठ रूप में प्रकाशित इस वेङ्कटाद्रि पर अखिलांड कोटि ब्रह्माण्डनायक श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी अवतरित होकर सदा दर्शन देते हुए भक्तगण का उद्धार कर रहे हैं। श्री वेंकटेश्वर स्वामी के दिव्यमंगल मूर्ति का केवल पलमात्र दर्शन कर तरने के लिए हजारों भक्त नित्य इस क्षेत्र की यात्रा करते रहते हैं। बुलाने मात्र से प्रसन्न होकर प्रत्यक्ष दर्शन देने वाले ये देवता, अभीप्सित इच्छाओं की पूर्ति करनेवाले वर देनेवाले देवता, श्रीबालाजी के अवतरित होने के इस क्षेत्र में स्वामी के दिव्यमंगल रूप, स्वामी की पुष्करिणि, पवित्र तीर्थस्थान, स्वामी को समर्पित नित्य कैंकर्य, स्वामी के ब्रह्मोत्सव आदि विशेषताओं को भक्तों तक पहुँचाने के संकल्प से तिरुमल-तिरुपति देवस्थानम् ने 'तिरुमल क्षेत्रदर्शिनी' नामक एक ग्रंथमाला प्रारंभ कर, पंडितों के द्वारा रचना करवाकर, प्रस्तुत करने का निर्णय लिया है।

इन ग्रंथों में अब श्री जूलकन्टि बालसुब्रह्मण्यम् जी द्वारा रचित 'तिरुचानूर क्षेत्र' नामक इस ग्रंथ का अनुवाद डॉ. के. एस. इन्दिरा ने किया है जिसे ति.ति.दे. भक्तों तक पहुँचा रहा है। हमारी आकांक्षा है कि

भक्तगण इस ग्रंथ द्वारा तिरुचानूर क्षेत्र में अवतरित माँ पद्मावती का उद्भव और इतिहास, वहाँ मनायी जानेवाली सेवाएँ आदि की जानकारी प्राप्त कर धन्य होंगे।

सदा श्रीहरि की सेवा में,

कार्यनिर्वहणाधिकारी,
तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्,
तिरुपति

विषयसूची

* * *

तिरुचानूर क्षेत्र

(क्षेत्र महिमा - उत्सव)

ईशानां जगतोस्य वेङ्कटपतेर्विष्णोः परां प्रेयसीं
तद्वक्षःस्थल नित्यवासरसिकाम् तत्क्षान्ति संवर्धिनीं
पद्मालंकृत पाणिपल्लवयुगाम् पद्मासनस्थां श्रियं
वात्सल्यादि गुणोज्वलाम् भगवतीं वंदे जगन्मातरम्।।

श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी न केवल तेलुगुवालों के लिए अवतरित भगवान ही नहीं, बल्कि तेलुगुवालों के गृहदेवता भी हैं! वे सातपर्वतों पर स्थित हैं। सातों जगों में आप अपूर्व हैं। अतीत में भी आप के समान ईश्वर नहीं था, भविष्य में भी आपके समान परमात्मा नहीं होंगे, नहीं दिखेंगे।

आजकल, इस वर्तमान युग में अपने सौभाग्य से, अपने ही समय में अपनी आँखों के सामने, देखो! उन सप्तगिरियों पर पर्वत समान दया की मूर्ति! परिपूर्ण मुस्कान के साथ सब पर दया की वृष्टि करनेवाले परमात्मा! अनेकों वरों की वर्षा कर भक्तगण को शीतलता प्रदान करनेवाले भगवान सप्तगिरीश श्रीनिवास ही हैं। वे ही वेङ्कटेश्वर, सात गिरियों पर स्थित रहने के कारण 'सप्तगिरीश' कहलाए।

अब उन सात पर्वतों पर स्थित बालाजी के 'दया' की प्रतिमूर्ति के समान दर्शन देनेवाली हैं अलमेलुमंगा। उस माता का दूसरा नाम 'पद्मावती' है। ये जगन्माता श्रीवेङ्कटेश्वर की हृदय सम्राज्ञी हैं। यह अलमेलुमंगा तिरुमल के आनंदनिलय में श्रीनिवास के वक्षःस्थल पर ''द्विभुजा व्यूहलक्ष्मी'' समान दो भुजाओं के साथ, यानि दोनों हाथों में कमलों को धारण कर पद्म में बैठी मुद्रा में 'व्यूहलक्ष्मी' नाम से अवतरित है।

इतना ही नहीं, सप्तगिरियों के नीचे जरा दूरी पर ''तिरुचानूर'' नामक गाँव में, कमल में आसीन होकर, चारभुजाओं के साथ अर्चामूर्ति बनकर यह माता दर्शन दे रही हैं। ऊपर के दोनों हाथों में कमल के फूल धारण कर, नीचे के वाम और दक्षिण हस्तों में अभय, वर मुद्राएँ धारण कर अर्चामूर्ति के रूप में पद्मावती समान दर्शन देने के कारण इस क्षेत्र को ''अलमेलुमंग पट्टणम्'' और ''तिरुचानूर'' नाम से प्रसिद्धि प्राप्त है।

ठीक है, पर यहाँ एक शक हो रहा है, संदेह मन में लग रहा है।

पति परमेश्वर वेङ्कटेश्वर पर्वत पर, उनकी धर्मपत्नी पद्मावती पर्वत के नीचे, सुदूर छोटे से गाँव में! यह कैसा? यह तो विस्मय पैदा करने वाली बात है।

हाँ! चाहे आश्चर्यजानक बात हो, पर यह तो यथार्थ है, पति 'सप्तगिरीश'' पर्वतों पर स्थित, पत्नी ''मंगम्मा'' पर्वतों के नीचे रहना विचित्र विषय ही है!

पर दोनों इस प्रकार दूर दूर क्यों हैं? इसके कारण क्या हो सकता है? कब से इस प्रकार दूर दूर हैं? संदेह की परम्परा को दूर करना ही है।

इससे हमें तिरुचानूर स्थल पुराण की जानकारी भी रहेगी, उस क्षेत्र की महिमा भी जान सकते हैं।

छोटा-सा गाँव। गाँव छोटा भी क्यों न हो, प्रसिद्ध पुण्यक्षेत्र के रूप में ख्याति प्राप्त है। कुछ लोग इस क्षेत्र को 'मंगपट्टणम्' कहते हैं, यही अलमेलुमंगपट्टणम् है।

कुछ हिन्दी भक्त 'पद्मावती मंदिर' या 'पद्मावतीपुर' कहते हैं।

पुराणों में ''श्रीशुकपुर'' रूप में वर्णन मिलता है, यही श्रीशुकपुर ही बाद में ''तिरुच्चुकपुर'', 'तिरुच्चुकनूर' 'तिरुचानूर' के रूप में कहलाया।

इतने नामों से बुलाया जाने वाला 'तिरुचानूर', तिरुपति नगर के ठीक आग्नेय दिशा में तीन मील की दूरी पर स्थित है। जो भी नाम से बुलाया जाय पर वहाँ स्थित है जगन्माता श्रीअलमेलुमंगम्मा।

'अलर मेल मंगा' का अर्थ है 'कमल पर प्रकाशित दिव्यकान्ता यानी दिव्य स्त्री' वे ही माता पद्मावती हैं! ठीक है।

पर वे कौन हैं? वे ही साक्षात् श्रीमहालक्ष्मी हैं। वे तो अत्यंत करुणा भरी माँ हैं। इस जगन्माता की दया के पात्र बने, उनकी करुणा प्राप्त करने के लिए भक्त यहाँ नित्य उनका दर्शन लेते रहते हैं। केवल मानव ही नहीं, हाँ, देवी - देवता भी उनकी दया प्राप्त करने के लिए त्रस्त रहते हैं, तडपते रहते हैं।

यही क्या? ये और वे नहीं, स्वयं साक्षात् आनंदनिलयवासी बालाजी भी उनकी दया प्राप्त करने सात पर्वत उतर कर उनके पास आते हैं। उस माँ के दर्शन के लिए तरसते हैं, राह देखते रहते हैं, प्रतीक्षा करते रहते हैं, तीव्र तपस्या की। एक या दो दिन नहीं, पूरे बारह सालों तक बिन खाये, पिये तपस्या की। अन्त में माँ की दया हुई। उस गाँव में स्थित पद्मसरोवर में सहस्रदल से पूर्ण स्वर्णकमल में अलमेलमंग अवतरित हुईं। पद्म में उद्भव होने के कारण आप 'पद्मावती' हुईं, इतना ही नहीं,

''अलरमेलमंगा'' यानि ''पद्म पर प्रकाशित दिव्य कान्ता'', यह तो पहले ही हम पता कर चुके हैं।

वेङ्कटेश्वर सात पर्वत उतर कर क्यों आये? पद्मावती के लिए यहाँ क्यों तपस्या की? यह कब की गाथा है? ये सब कब हुए?

इन संदेहों की पूर्ति के पहले, बुजुर्गो ने इस विषय पर क्या राय दी हैं, उस पर भी दृष्टि दौडायेंगे!

थोडी-सी करुणा

बहुत पहले की बात है!

सात पर्वतों पर जिस प्रकार वेङ्कटेश्वर स्थित हैं, ठीक उसी प्रकार उतनी ही ऊँचाई पर, अन्य पर्वत शिखर पर माना जाता है कि माँ पद्मावती भी अवतरित हुई थीं।

यह भी प्रसिद्ध है कि माँ पद्मावती, अपने भक्तगण पर, स्वामीजी से भी आधिक करुणा बरसाती थीं। जैसे भी हो वे हैं जगत् की मैया, जगन्माता! सब की स्थिति वे जानती हैं। केवल जानकारी ही से तृप्त नहीं, वे तो अति तत्परता के साथ, बिना किसी ऊब से अपने नाथ श्री वेङ्कटेश्वर से कहती है, कहना ही नहीं, यहाँ इस तिरुचानूर क्षेत्र में, अर्चा रूप में सुनी हुई बातें, सप्तगिरी पर स्थित श्री स्वामी के वक्षःस्थल से आगे बढ़कर उनके कानों के पास ''व्यूहलक्ष्मी'' के रूप में रहने वाली माँ पद्मावती, उनके कानों में घर बना देती हैं। अपनी सन्तान की आवश्यकताएँ, उनके दुःख दर्द को दूर करने के लिए अत्यंत प्रेम के साथ, आर्द्रता के साथ उनकी इच्छाओं की पूर्ति करती हैं।

अगर, स्वामी कुछ अडिग हों तो, माँ कहती हैं - स्वामी! तिरुमलेश! आपके वक्षःस्थल पर मेरा अस्थित्व है, इसीलिए तो आप 'श्रीनिवास कहलाए! मेरे लिए, वैकुण्ठ छोड आए, मेरी करुणा प्राप्त करने के लिए आपने तपस्या भी की है, क्या आप इस विषय को भुला दिये हैं', ऐसी कहती हुई - 'अपनी इच्छा के अनुसार, सिफ़ारिश के अनुसार हम दोनों के पास आनेवाले भक्तों के मन को आनंद दो स्वामी!' बडी सुकुमारता के साथ, स्वामी के मन को भक्तों की ओर कर उन्हें प्रसन्न करती है। भरपूर अनुग्रह प्रदान करनेवाली माता हैं श्रीअलमेलुमंगा!

फिर क्या?, माँ की बात को न टालने वाले, टालना न चाहने वाले सप्तगिरीश सिर हिलाते हुए कहते हैं 'ठीक है, आप तो माताओं की माँ हो, भक्तगण पर मुझसे ज्यादा आप ही को करुणा अधिक है', यह तो इस दिव्यक्षेत्र में नित्य यह घटना घटती ही रहती है।

लगभग पाँच हजार वर्ष पहले, श्रीनिवास ने श्रीमहालक्ष्मी के लिए तिरुचानूर के पद्मसरोवर के पास तपस्या की, एक बार,

कार्तिक महीने के शुद्ध पंचमी के दिन,
पद्मसरोवर में सहस्रदल स्वर्णकमल में
पद्मावती के रूप में अवतरित हुई है ।

उस दिन की स्मृति में आज तक हर वर्ष कार्तिक महीने के शुद्ध पंचमी के दिन ''पंचमी तीर्थ'' या ''तिरुचानूर पंचमी'' नाम से माँ पद्मावती का अवतारदिनोत्सव धूमधाम से मनाते हैं। उस दिन श्रीनिवास तिरुमल से माँ पद्मावती के लिए हल्दी, कुंकुम, सारे(भेंट), मिठाई आदि भेजते हैं। यह माना जाता है कि जब तक तिरुचानूर में उस दिन

पद्मपुष्करिणी में माँ पद्मावती का चक्रस्नान पूर्ण नहीं होगा तब तक तिरुमल में स्वामी श्रीनिवास पानी तक ग्रहण नहीं करते।

अर्थात् तिरुमल क्षेत्र जब से है, तिरुचानूर भी उतना ही प्राचीन क्षेत्र, उतनी ही महिमामई क्षेत्र के रूप में प्रसिद्ध है।

इसीलिए, तिरुमल के यात्रियों को, पहले तिरुचानूर में स्थित माँ पद्मावती का दर्शन कर, बाद में, तिरुमल पर्वत पर पहुँचकर स्वामी का दर्शन लेना सदा सर्वश्रेयस्कर है, सर्व सिद्धिप्रद भी है।

और एक बात है! यह परम पवित्र स्वर्णमुखी नदी के किनारे का शुकमहर्षि आश्रम प्रान्त है। पास ही में एक ओर पराशर महर्षि का आश्रम (जोगिमल्लवरम्) है, दूसरी ओर योगपर्वत प्रान्त है! पास में सात पर्वत! सबके वीच में स्थित है अलमेलुमंगपट्टणम्।

दिव्य और भव्य तिरुचानूर का स्थलपुराण, वहाँ माँ अलमेलुमंगा के लिए मनाए जाने वाले उत्सवों के बार में अब जानकारी प्राप्त करेंगे।

स्थल पुराण

पाँच हजार वर्षों से भी पहले की बात! पावन गंगा नदी के किनारे सभी मुनिगण एकत्रित हुए, एक यज्ञ की परिकलपना कर रहे थे। जगत् कल्याण के लिए, प्रजा की सुरक्षा के लिए एक महान् यज्ञ की कल्पना की। अतिशीघ्र ही यज्ञ के लिए आवश्यक वस्तुएँ इकट्ठा की गई।

वन के बीच झरनों की झर झर ध्वनि! सर, सर बहती सरिताएँ, पक्षिओं का कलरव, जनवरों का हुँकार ..... ऐसी शान्त सुप्रभात की बेला ...! शुभ मुहूर्त्त निकल ही गया।

मंगलध्वनि, वेदमंत्र, हविस, होम से उठती धुँआएँ .... इन सबसे वहाँ का वातावरण अत्यंत पवित्र हो उठा। सर्वत्र विचित्र-सी आध्यात्मिक चेतना लहरा गई।

इतने में नारायण! नारायण! कहते हुए दवर्षि नारदजी वहाँ पहुँचे।

प्रारंभ समय में नारद का आगमन! सबने सोचा अब आगे क्या होगा? कलह भोजनप्रिय नारद के आने पर पता नहीं कितने झगडे होंगे? महर्षि चौंक पडे।

ऐसी शुभवेला में, दवर्षि नारद का आना, दर्शन देना तो बडी महत्वपूर्ण बात है।

कुछ तापसियों ने सोचा कि जगत कल्याण के लिए जो तपस्या की जा रही है यह अवश्य सुसंपन्न होगा, फलीभूत होगा।

कुछ ऋषि, मुनि वहाँ की स्थिति का अन्दाजा लगा रहे थे, जो भी हो यज्ञ के आरंभ के समय नारद का आना, यहाँ के इस बृहत कार्य में अनेकों परिवर्तन भी हो सकते हैं - जाने क्या होगा?

नारायण! नारायण!!

नारद के नामजप से सब की सोच रुक गयी। सभी ने नारद का स्वागत किया, आतिथ्य दिया, उनके सम्मान से नारद प्रसन्न होकर कहने लगे - मुनि! पुंगव! आप लोग क्या करनेवाले हो?

सभी ने एक साथ जवाब दिया - ''देवर्षि! हम ने एक यज्ञ करने का निर्णय लिया है। इस यज्ञ का हमारा उद्देश्य जगत कल्याण ही है। ऐसे समय में आपका पधारना सौभाग्य की बात है! इस महत्कार्य में आपके

आशीर्वाद हमें चाहिए।'' 'नारायण! नारायण!!' - कहते हुए नारद ने प्रश्न किया - 'लोक कल्याण के लिए आप यज्ञ कर रहे हैं, अच्छा। बहुत खूब! पर लोक कल्याणकारी यज्ञ देवता कौन हैं? शिव? विष्णु या! ब्रह्म! ये ही हैं या और कोई आपकी नज़र में हैं?'

नारद महर्षि के प्रश्नों से मुनिगण असमंजस में पड गये और, एक दूसरे को देखने लगे। उनकी दीनावस्था को देख, नारद ने आगे कहा - 'देवताओं में त्रिमूर्ति ब्रह्म, विष्णु, शिव मुख्य हैं न? पूछने पर ही सहारा देनेवाले हैं कौन? माँगने पर ही वर देनेवाले देवता कौन हैं? पापों को दूर करने वाला परमात्मा कौन है? सभी को हर समय सहारा देनेवाले ईश्वर कौन हैं? विनती करनेवालों के लिए हथेली के समान, बुलाने पर ही प्रसन्न होकर प्रत्यक्ष होने वाले दैव, इन सभी बातों का निर्णय लेकर, उस पुरुषोत्तम के लिए यज्ञ कीजिए! आपकी अभिलाषा की पूर्ति होगी, लोककल्याण भी होगा।'

'नारायण! नारायण!' कहते हुए नारद मुनि अदृश्य हुए।

सब के भगवान

नारदजी का वहाँ आना, अपना संदेह छोडकर अदृश्य होना, आदि से सभी मुनिगण चौंक पडे। अनेक चर्चाएँ हुईं, वाद विवाद भी हुए कि त्रिमूर्तियों में कौन महान है? निर्णय पाना क्या आसान काम है? अन्त में इस कार्यभार को तपोसंपन्न भृगु महर्षि को सौंपकर उनकी प्रार्थना की।

भृगु महर्षि तथा सब ने मन ही मन सोचा - यह तो जगत कल्याण की बात है, कितनी ही यातनाएँ क्यों न हो स्वीकारना ही होगा। त्रिमूर्ति तो महान हैं, उनमें किसे महान मान कर चुनना होगा? तीनों महान हैं!

ठीक है, जब काम सौंप ही लिया तो, डरने से क्या लाभ? इस प्रकार सोचते हुए, भृगु महर्षि सत्यलोक में कदम रखा।

तुम्हारी पूजा, अर्चना न हो

सृष्टि निर्माता के आवास का लोक ही सत्यलोक है। सामने दूध से भी उज्ज्वल सफेद, बडे से पद्मपीठ पर चतुर्मुख ब्रह्म वेदोच्चारण कर रहे थे।

वेद मंत्रों की ध्वनि से वातावरण अनुगुंजित हो रही है। ब्रह्म अपने संकल्प के अनुरुप अपनी उँगलियों को हिलाते हुए सृष्टि कार्य चलाना अद्भुत दृश्य रहा, सभी आश्चर्यचकित थे।

पास में अन्य श्वेत कमल पर विद्या की देवी सरस्वती विद्यमान थीं। वे अपनी नाजुक, सुकोमल उँगलियाँ चलाती हुईं अद्भुत वीणानाद करते हुए मन मोह रही थी, सभी को आनंद के जगत में झुला रही थीं।

इस सुन्दर दृश्य से भृगुमहर्षि चकित हुए। आनंद विभोर हुए। मुनि ने उस दिव्य दम्पति की स्तुति की, पर दोनों देख ही नहीं रहे थे! सोचा - क्या यही बेपरवाही है? या मेरा आना देखा नहीं है? पर वे तो दूसरों की वंदना स्वीकार रहे थे। उनसे बातें कर रहे थे। कम-से-कम एक बार भी वे भृगु महर्षि पर ध्यान नहीं दे रहे थे। उन्होंने सोचा - इतना अनादर! चाहे वे देवता भी क्यों न हो, रजोगुण से भरपूर लग रहे हैं ये। क्या वे महान हैं? हमारे यज्ञ के लिए योग्य हैं? क्रोधी भृगु महर्षि आगे बढ़कर शाप देते हुए कहा - 'इस भूलोक में आप जैसे रजोगुण संपन्न भगवान के लिए पूजा, अर्चना नहीं होगा!' ऐसा कहते हुए वे सत्यलोक से चल पडे।

जंगम बने रहो

भृगु सत्यलोक से तो निकल पडे पर अपने अपमान भार से बाहर नहीं आ पाये। सोचते हुए मुनि कैलाश में प्रवेश किया। उन्हें देखते ही नंदीश्वर रोकते हुए कहा - 'यह योग्य समय नहीं, पार्वती परमेश्वर अपने एकान्त में हैं, अपने रास्ते बढ़ो।'

क्रोधी, तापसी भृगु के सामने नंदीश्वर क्या ही चीज़ है? गणना? उन्हें नकारते हुए कैलाश में प्रवेश किया! बस! प्रणय की वेला में पार्वती परमेश्वर की एकान्तवास में बाधा पडी। और क्या? रुद्र क्रोध से ताण्डव करते हुए अपने त्रिशूल से भृगु को मारने तैयार हुए। इतने में पार्वती ने उन्हें रोका। मृत्यु से बचकर भृगु महर्षि ने शिव को देखते हुए, शाप दिया - 'हे शिव! तुम परमतापसी हो, भूलोक में शिला बनकर पडे रहो! केवल लिंगाकार में ही पूजा तुम्हें प्राप्त होगी।' बडे क्रोध से इस प्रकार कहते हुए वैकुण्ठ के लिए भृगु महर्षि चल पडे।

हे परमात्मा! सब की पूजाएँ स्वीकारो

विचलित होकर भृगु महर्षि वैकुण्ठ में कदम रखा। वैकण्ठ में महाद्वार पर पहरा देनेवाले जय, विजय, भृगु की हालत को देखकर भयभीत हुए।

भृगु अति शीघ्र गति से वैकुण्ठ के अन्तःपुर की ओर चल दिये।

ओ! हो! कैसा सुन्दर दृश्य! शेषशय्या पर श्रीमहाविष्णु! उनके वक्षःस्थल पर बडी श्रद्धा के साथ सिर रखकर श्रीमहालक्ष्मी वार्त्तालाप कर रही थी। उस मनोहर दृश्य को देखकर एक पल के लिए भृगु विस्मय और आनंद से भर गये। इतने में ही, क्रोध ने उनके आनंद को हर लिया।

दिव्यमंगल दम्पति श्रीलक्ष्मीनारायण उस तापसी को देखकर भी, अनदेखा रह गये। अभिनय में साक्षात् परमशिव को भी भ्रान्ति में डालनेवाले जगनमोहनमूर्ति श्रीमहाविष्णु के लिए, भृगु की गिनती क्या?

बेचारे भृगु। चाहा कि वे दोनों इन्हें देखें, उनकी दृष्टि इन पर पडे, भृगु ने प्रार्थना की, विनती की, पर कोई फायदा नहीं रहा। नारायण ने श्री महालक्ष्मी को आलिंगन में बाँध लिया, भृगु क्रोध से जल उठे, मेरे सामने होते हुए, ऐसा श्रृंगार? सत्यलोक में, कैलाश में, केवल बातों तक ही सीमित यह क्रोध अब और बढ़ गया। क्रोध की तीव्रता में भृगु ने एकाएक लाँघ कर अपने वामपाद से श्रीहरि के वक्षःस्थल पर ताड दिया, भृगु रहे मानव! वे हैं साक्षात् परमात्मा! वह क्रोधी तापसी विवेक भी खो दिया, पाप कर बैठा!

चाहे कितना भी महान क्यों न हों क्रोध के वश हो जाये, तो व्यवहार ऐसा ही होता है। इसलिए बुजुर्गों ने कहा - अपना क्रोध तो अपना ही शत्रु होता है।

इस घटना से आदि लक्ष्मी भयभीत हुईं। चौंक कर पीछे हटी, बस क्रोधी भृगु का पैर श्रीमन्नारायण के वक्षःस्थल पर जोर से लगा।

इस विचित्र घटना से विचलित श्रीहरी, एकदम शय्या से उतरे, गुस्से से भृगु हिलने लगे। प्रणाम करते हुए श्रीहरी ने कहा! 'हे! मुनीश्वर! आपका आगमन मैं ने देखा नहीं, मुझसे भूल हुई, क्षमाप्रार्थी हूँ', ऐसा कहते हुए उनके पैर दबाते हुए, अचानक पैर के नीचे के अहंकार नेत्र को दबा दिया।

और क्या? उस ऋषि का अज्ञान, अहंकार इत्यादि दूर हुए, और भृगु ने अपने अपराध की क्षमा माँगी। श्रीलक्ष्मीनारायण की प्रार्थना की, मिन्नतें माँगी। मैं रहा अविवेकी, इतना बडा भूल कर बैठा, पर आपने अपनी क्षमा बुद्धि से क्षमा की! आप ही आगे के कलियुग में प्रत्यक्ष भगवान के समान पूजा स्वीकारने योग्य रहेंगे। भक्तों को अपने परमसात्विक और सुन्दर रूप के साथ, बडी तत्परता के साथ सबका उद्धार करनेवाले आनंदनिलयवासी तुम्हीं बनोगे। हे स्वामी! आप तो करुणासागर, लोककल्याणकारी हो, नित्य कल्याण चक्रवर्ती आप ही हो।

भृगु श्रीमहाविष्णु को साष्टांग प्रणाम करते हुए कहने लगा - 'लोक कुशलता के लिए हम मुनिगण, यज्ञ करना चाहते हैं, उसके लिए आप ही सर्वोत्तम यज्ञाधिपति हैं!' कहने के बाद भृगु महर्षि भूलोक के लिए सिधर पडे।

भृगुमहर्षि के निर्णय के अनुसार, श्रीमहाविष्णु प्रधान देवता के रूप में स्थापित हुए। यज्ञ का आयोजन बडे धूमधाम से हुआ।

उस यज्ञ के फलस्वरूप साक्षात् श्रीमहालक्ष्मी, श्रीमहाविष्णु श्रीवैकुण्ठ से धरती पर उतर आये।

उस क्रोधी महर्षि के करतूतों से पता नहीं अब वैकुण्ठ क्या है? वहाँ की क्या स्थिति है? बाद की कथा क्या? ... जानकारी प्राप्त करना है तो हमें फिर वैकुण्ठ जाना ही पडेगा। चलिए! चलते हैं।

लक्ष्मी ने वैकुण्ठ छोड दी

श्रीहरि के हृदय पर सदा वास करने वाली, उस पवित्र स्थान को अपने पैरों से ताडने के दुराचार से, दुर्जनता को रोके बिना सजा न देते

हुए, उस महर्षि को अपनी शेषशय्या पर बिठाना?... ऊपर से उनके पैर छूकर प्रणाम करना! कितनी बुरी बात है? कितना अपमान? मेरी आँखों के सामने मेरे प्राणनाथ उस मुनि के चरण पकडते हैं? क्षमा याचना करना महालक्ष्मी को अपमान जैसा लगा। अपने ही गृह में इस दुर्घटना पर खिन्न हुई। क्रोध से, वैकुण्ठ छोडकर चली गई।

इस उल्टे परिणाम पर विष्णु भगवान चकित हुए, लक्ष्मी से विनती की, इस कृत्य को इतनी गंभीरतापूर्वक न सोचने के लिए कहा। आगे कहने लगे - भृगु तो अपनी संतान समान है। बेटे का मातापिता के हृदय पर ताडना, पैरों से कुचलना सहज सी बात है, इसलिए वैकुण्ठ नहीं छोडने के लिए अनके रूपों से प्रार्थना की।

सच ही! ऐसा होना नहीं चाहिए था। कुछ ही पल में सब कुछ हो गया। विष्णु भगवान ने लक्ष्मी देवी से अनेक प्रकार से विनती की और कहने लगा - 'मुझे क्षमा कर दो। उस अविवेकी मुनि पर जो क्रोध है उससे अपना परिवार मत बिगाडें। आवेग में आकर मुझे और इस वैकुण्ठ को मत छोडो। इससे हम दोनों को यातनाएँ सहनी पडेगी। दोनों की हानि होगी।'

अपनी ही जिद पर अडिग रहकर लक्ष्मीदेवी कुछ न कहती हुई विष्णुपुर और विष्णु भगवान को छोडकर पाताल में स्थित कपिल महामुनि के आश्रम में पहुँच गयी। उस महर्षि ने माँ को तसल्ली देते हुए कहा - 'हे माँ! अपनी इच्छानुसार तुम यहाँ रह सकती हो। संपत्ति की देवी श्रीमहालक्ष्मी उस दिन से कपिल के आश्रम में शान्त चित्त से ध्यान करती हुई अपनी तपस्या में लीन हो गई।

कोलासुर भयंकरी

कुछ समय बाद अगत्स्यादि मुनिगण, देवता गण ने कपिलमहर्षि के आश्रम में स्थित महालक्ष्मी का दर्शन करके प्रार्थनाएँ की। उनकी विनती इस प्रकार रही - 'हे! जगन्माता! यह संपूर्ण भूलोक राक्षसों से भर गया है। उनका वध केवल तुम्हारे हाथ में ही है, और किसी से नहीं हो सकता है।'

प्रधानतः 'शिवालय; यक्षालय', 'पद्मावतीपुर', 'दक्षिणकाशी' नामक अनेक नामों से प्रसिद्ध एक नगर है। वहाँ उसका नाम 'करिवीरपुर' है और वहाँ 'कोलहासुर' नामक अतिभयंकर राक्षस का शासन अत्याचारों से, दूभर लग रहा है। इसके पहले इस नगर को कोलहासुर का पुत्र 'करिवीर' शासन करता था। उस भयंकर राक्षस का वध स्वयं शिव ने किया था। आजकल इस क्षेत्र का शासन करिवीर के पिता 'कोलहासुर' कर रहा है हे माँ। तुम पधारो और कोलहासुर का वध कर लोक कल्याण, करो हे जननी!

सबकी प्रार्थना सुनकर श्रीमहालक्ष्मी पाताल से भूलोक पर पधारी। करिवीरपुर पहुँचकर महाक्रूर कोलहासुर के साथ युद्ध किया। सभी देवी, देवताएँ महालक्ष्मी की मदद के लिए आये। देवताओं ने अपने अस्त्र, शास्त्र भी दिये। देवताओं की मदद से उसने कोलहासुर का वध किया। वह राक्षस लक्ष्मीदेवी के हाथ में मरते हुए अपनी अन्तिम इच्छा प्रकट की कि - 'हे माँ! मेरी इच्छा है कि यह नगर मेरे नाम से प्रसिद्धि पायें, और इस नगर में आप अर्चादेवी के रूप में रहो।' माँ ने 'तथास्तु' कहा।

उस दिन से यह शहर 'कोल्हापुर' कहलाया। आर्चामूर्ति श्रीमहालक्ष्मी 'कोल्हासुर भयंकरी' नाम से प्रसिद्धि पायी, इसके पहले ही कोलासुर के पुत्र करिवीर के नाम पर यह क्षेत्र 'करिवीरपुर' भी कहलाया।

कोल्हापुर श्रीमहालक्ष्मी (महाराष्ट्र)

कोल्हापुर क्षेत्र काशी से भी महिमामई है, पावन है। काशी केवल मोक्ष प्रदान करती है, मुक्ति देती है पर 'करिवीरपुर' या 'कोल्हापुर' नाम से प्रसिद्ध यह क्षेत्र ऐश्वर्य और समस्त इच्छाओं की पूर्ति के साथ मोक्ष भी प्रदान करती है। इतना ही नहीं, माना जाता है कि यह क्षेत्र काशी क्षेत्र से भी एक गेहुँ के बीज से अधिक भार रखता है क्योंकि काशी में केवल शिव हैं, पर कोल्हापुर क्षेत्र में शिव के साथ सभी देवता गण के साथ महाशक्तिसंपन्न 'श्रीमहालक्ष्मी' भी अर्चामूर्ति के रूप में दर्शन देती है।

उस दिन से 'कोल्हापुर' अद्भुत महिमा के साथ सिद्धिक्षेत्र, साधनाक्षेत्र समान ख्याति प्राप्त की है। अष्टादश शक्तिपीठों में कोल्हापुर की शक्ति 'श्रीमहालक्ष्मी' के नाम से विख्यात है।

अष्टादश भुजाओं (18) के साथ, रौद्र से कोलासुर का वध कर लक्ष्मी देवी कोल्हापुर में चारभुजाओं से दर्शन देती है। ऊपर के दोनों हाथों में गदा, ढ़ाल, नीचे के दोनों हाथों में मातुलंग फल, पान पत्र धारण कर, सिंह पर आसीन पश्चिम की ओर मुख के साथ वहाँ की स्थानमूर्ति समान दर्शन देती है।

लक्ष्मी की खोज

क्रुद्ध होकर श्रीमहालक्ष्मी वैकुण्ठ छोडकर गयी तो वैकुण्ठ गृहिणि विहीन गृह बन गया। वैकुण्ठ सूना सूना पड गया। संपत्ति बिना वैकुण्ठ में श्रीमहाविष्णु की स्थिति दयनीय बन गयी। अपने दूभर एकान्त में तडपते हुए श्रीमहाविष्णु लक्ष्मी की खोज में भूलोक पर उतारे। उनके लिए सारा भूलोक छान डाला। लक्ष्मी! लक्ष्मी नाम लेते हुए, कदम कदम

पर, अणु अणु खोज डाले। पर उनका कहीं पता नहीं लगा। लक्ष्मी के बिना उन्हें वैकुण्ठ जाना पसन्द नहीं था। अगर वहाँ जाय तो क्या वे लक्ष्मी के विरह में जी पायेंगे? यह सोचते हुए उन्होंने निश्चय कर लिया कि वे किसी भी हाल में भूलोक में ही रह जाएँगे।

इस प्रकार घूमते घूमते आदिवराह क्षेत्र पहुँचे। इस क्षेत्र को 'श्वेतवराहक्षेत्र' भी कहते हैं। उस क्षेत्र में भूख और प्यास से तडपते हुए, रहने के लिए जगह नहीं, उठ - बैठ न सकने वाले, भीगी बिल्ली समान भाग दौड करने वाले श्रीनिवास को 'स्वामी पुष्करिणी तीर्थ' दिखाई दिया। उस तीर्थ की दक्षिणी दिशा में एक इमली का वृक्ष और एक साँप का बिल दिखाई दिये। वहाँ एक बिल समान जगह दिखाई दी, बस, उसी में विष्णु भगवान छिपकर रहने लगे।

'कहाँ वैकुण्ठ! कहाँ भूलोक में स्थित यह वाल्मीक! साक्षात् वैकुण्ठपति का इस प्रकार साँप के बिल में रहना, भूख और प्यास से तडपना, देखा आपने! कितना महान रहा अब कैसा बन गया?'

समस्त लोकों में, सभी ऐश्वार्यों की अधिदेवता श्रीमहालक्ष्मी कहाँ? पाताललोक का यह मुनि आश्रम कहाँ? विधि की विडम्बना है! कारण जो भी हों, गलती किसी की भी हो, आपस में अगर दम्पति में समझौता न हो तो, तो जीवन ऐसा ही होता है। लक्ष्मी श्रीनिवास की कथा से मानव यह समझ सकता है।

बेचारे, परमात्मा जो बिल में रहें उनकी दीनावस्था को देखकर ब्रह्म, परमेश्वर दोनों, सीधे कोल्हापुर पहुँचे। स्वामी जी की संपूर्ण स्थिति का विवरण लक्ष्मी को देकर, अतीत के विचारों को छोडकर उनके पास जाने

के लिए सलाह दी। पर वह एक न मानी। जिद्दी लक्ष्मी को, कम से कम स्वामी के भूख तथा प्यास को मिटाने के लिए कहा।

तीनों मिलकर वराहक्षेत्र पहुँचे। श्रीमहालक्ष्मी 'गोपिका' के समान, ब्रह्म 'गोमाता' समान, शिव गोवत्स समान बदल गये। गोपिका, उन गाय और बछडे को राजा चोल को बेचकर चली गयी।

राजा के पशु समूह के साथ ये नये गाय और बछडा भी घास चरने के लिए जंगल जाते थे। वहाँ पहुँचने के बाद ग्वाले की आँख बचाते हुए वराह पर्वत पर पहुँचकर, स्वामिपुष्करिणी के किनारे पर स्थित इमली पेड के नीचे जो साँप का बिल था वहाँ दूध निचोड़ती थी। भूखे श्रीनिवास झट से दूध पी जाते थे।

हर दिन यहाँ श्रीनिवास को दूध पिलाने के कारण घर पर वह गाय दूध नहीं देती थी। ऐसा क्यों हो रहा है? कारण जानने के लिए ग्वाला उसके साथ गया।

बस। दूसरे दिन पर्वत पर साँप के बिल के पास दूध निचोडती हुई गाय को देखकर ग्वाला जल उठा। गुस्से से गाय पर अपनी कुल्हाडी दे मारा। गाय डर कर हट गयी तो कुल्हाडी सीधा जाकर, ऊपर की ओर उठने वाले श्रीनिवास को जोर से लगा। तुरंत एक दिव्यपुरुष खून बहाते हुए दिखाई दिया तो ग्वाला आश्चर्यचकित हुआ, भयभीत हुआ वहीं गिरकर मर गया।

इस विषय को जानकर चोल राजा दौडकर आये और अपनी भूल की क्षमा माँगी। 'पाप की सजा तो भोगना ही है' - कहते हुए श्रीनिवास ने चोल राजा को शाप दिया कि 'तुम पिशाच बन जाओगे।' राजा की

प्रार्थना से पिघल कर, श्रीनिवास ने वर दिया कि - 'आगे चलकर मेरा विवाह आकाशराजू की पुत्री पद्मावती के साथ होगा, उस समय आकाशराजू एक मुकुट मुझे पहनाऐंगे, तुरंत आप शाप से मुक्त हो जाओगे।'

बाद में, पहले उनका दर्शन जिस ग्वाला ने किया, उस मृत ग्वाले की सन्तान को भी कलियुग के अन्त तक हर दिन पहला दर्शन देने का वर दिया।

बाद में श्रीनिवास वराह पर्वत पर भ्रमण करते हुए, वहाँ स्थित वराहस्वामी का दर्शन किया, अपनी दीन गाथा सुनाकर रहने के लिए थोडी-सी जगह माँगी। फलस्वरूप, नियम बनाया कि कलियुग में उनके दर्शन के लिए आनेवाले यात्रियों को, पहले वराह स्वामी का दर्शन, तत्पश्चात् श्रीनिवास का दर्शन करना होगा। इतना ही नहीं, प्रथम पूजा, प्रथम निवेदन भी वराहस्वामी को ही देना होगा। इन सभी वचनों को सुनने के बाद, श्रीनिवास को रहने के लिए सौ फुट स्थान को दान में देने के साथ साथ, उनकी सहायता के लिए वराहस्वामी ने वकुलमाता को नियुक्त किया।

यहाँ अपने मन में कुछ शक हैं? ये वराहस्वामी हैं कौन? वकुल माता कौन हैं? वराहस्वामी ने मातावकुला को ही क्यों सहायता के लिए रखा? इन सन्देहों की निवृत्ति के बाद आगे मिलेंगे।

विष्णु ही वराहस्वामी हैं

प्राचीन काल में जल प्लावन हुआ था। उस अनंत जलराशि में सभी लोक डूब गये। लगभग इसी संदर्भ में हिरण्याक्ष नामक राक्षस ने

भूमण्डल को खेलने की गेंद के समान बना लिया। उसके साथ खेलते हुए भयंकर करतूते कीं। भूदेवी की प्रार्थना पर, देवी - देवतों की विनती पर श्रीमहाविष्णु आदिवराह रूप धारण कर सफेद वराह बनकर होकर, अपनी नुकीली दान्तों से हिरण्याक्ष का वध किया। उन्हीं दान्तों से भूमि का उद्धार किया।

देवताओं की इच्छा के अनुरुप आदिवराह स्वामी अर्चामूर्ति बनकर भूदेवी के साथ नहीं रहे, वही आदिवराहक्षेत्र, श्वेतवराहक्षेत्र है।

उसके पश्चात् वराहक्षेत्र पहुँचने पर वराहस्वामी से श्रीनिवास की भेंट हुई। तब तक उनकी सेवा करनेवाली माता वकुलादेवी अब श्रीनिवास की सेवा के लिए नियुक्त हुई।

यशोदा ही माँ वकुला है

अगर द्वापरयुग की कथा जानेंगे तो, माँ वकुला की कथा जान सकते हैं।

बालक कृष्ण का लालन पालन करनेवाली मातृमूर्ति यशोदा है। श्रीकृष्ण की अद्भुत लीलाओं को वह अपनी आँखों से देख चुकी थी, और अब श्रीनिवास को देखकर आश्चर्यचकित हुई और आनंदित भी हुई। आनंद से उनका मातृहृदय भर गया। पर कृष्ण के बडे होने के बाद उनकी शादी तो नहीं कर पायी। शायद आँखों से भी देख नहीं पायी होगी। क्योंकि द्वारका में देवकी वसुदेव के देख रेख में धूमधाम से श्रीकृष्ण के विवाह दूर दूर से देखकर दुःखित हुई। इसे श्रीकृष्ण ने जाना और यशोदा को तसल्ली देते हुए कहा - 'माँ! मैं कलियुग में वेङ्कटाचल पर श्रीनिवास के रूप में रहूँगा। आप तब वकुलामाता के समान मेरी सेवा

करोगी, तब पास रहकर मेरे विवाह संपन्न कर आनंद का अनुभव पाओगी।' उसी समय की यशोदा ही आज की वकुल माता है।

वकुला माँ श्रीनिवास की परवरिश अपने पुत्र के समान करती थी। फिर एक बार श्रीनिवास मातृप्रेम पाकर अपने कष्ट भूल गये।

एक दिन सप्तगिरियों में घूमते समय श्रीनिवास को आकाशराजू की पुत्री पद्मावती अपनी सखियों के साथ वन में विचरण करती हुई दिखायी पडी।

पद्मावती और श्रीनिवास एक दूसरे को देखकर मोहित हुए। परपुरुष श्रीनिवास पर सखियाँ पत्थर फेंकने लगीं। घायल होकर रक्त बहाते हुए श्रीनिवास घर लौटे। पूरी कहानी माँ वकुला से कहकर श्रीनिवास ने पद्मावती से विवाह करने की इच्छा प्रकर की। वकुलामाता को संदेह हुआ कि कहाँ महाराज आकाशराजू? और कहाँ चट्टानों पर घूमने वाले श्रीनिवास? दोनों में सम्बन्ध कैसे जुड सकता है? इन सन्देहों का उत्तर देते हुए श्रीनिवास ने कहा - 'वह और कोई नहीं, उस समय की वेदवती ही आज की पद्मावती है।'

इन बातों पर वकुला माँ आश्चर्यचकित हुई और श्रीनिवास ने त्रेतायुग की कहानी यों सुनायी।

वेदवती ही पद्मावती है

रामावतार का समय!

सीता - राम लक्ष्मण का चौदह वर्ष अरण्यवास करने का समय। सीता का अपहरण कर रावण अपने साथ लंका ले गया। उस समय अग्निदेवता रावण को दिखाई दिया। उसने रावण से कहा - 'हे रावण!

तुम जिसे ले जा रहे हो, वह सीतादेवी कदापि नहीं है, असली सीता मेरे पास है।' इस प्रकार कहते हुए उनके संरक्षण में जो 'वेदवती' नामक माया सीता है, उन्हें दिखाया। अग्नि की बातें सुनकर, उसे सच मानकर, रावणासुर ने सीता को सौंप दिया तथा उनके पास जो 'वेदवती' है, उन्हें अपने साथ ले गया।

रावण के वध के उपरांत, श्रीराम ने सीता की पवित्रता के निरूपण में सीता को अग्नि प्रवेश करवाया। उस समय अग्निकुण्ड से सीता के रूप में दो स्त्रियाँ बाहर निकलीं।

श्रीरामचन्द्रजी आश्चर्यचकित हुए। अग्नि के देवता प्रत्यक्ष होकर कहने लगे - 'हे राम! अब तक लंका में 'वेदवती' ही थी, असली सीता तो मेरे पास है।' तब सीता देवी राम से विनती करती है कि 'मेरे बदले लंका में जो वेदवती कष्ट उठा रही है, उससे भी विवाह करो।'

तब राम वर देते हुए कहते हैं कि - 'इस अवतार में मैं एक पत्नीव्रत के रूप में रहूँगा, कलियुग में वेङ्कटाचलपति के रूप में अवतरित जब होऊँगा, तब, यह वेदवती, आकाशराजू की पुत्री 'पद्मावती' के नाम से जन्म लेगी। उस समय इनसे मैं विवाह करुँगा।' वे स्पष्ट करते हैं कि अब जो पद्मावती है वह उस समय की वेदवती थी।

ठीक है पर, यह वेदवती है कौन? यह सन्देह वकुला माता को कतरने लगा।

लक्ष्मीदेवी ही पद्मावती है

प्राचीन काल में मय नामक एक वेद पण्डित हुआ करता था। वह ब्राह्मण सदा वेदपठन करता रहता था। एक बार वेद पढ़ रहा था तो उन्हें

'ऊर्वशी' नामक अप्सरा दिखाई दी। उसकी सुन्दरता पर वह आकृष्ट हुआ। काम वासना में लीन मय का इन्द्रिय पतन हुआ। उसमें से 'लक्ष्मीदेवी' पैदा हुई। वेद पठन के समय जन्म लेने के कारण वह 'वेदवती' नाम से स्थिर रह गई और उसका पालन पोपण उस ब्राह्मण ने किया। उसके पश्चात् वेदवती विष्णु से ही विवाह करना चाहती थी। वह तपस्या करने लगी, उस तपस्या में लीन वेदवती पर रावण ने अत्याचार किया। तुरन्त वेदवती ने कहा - 'विष्णु के सिवा और किसी से विवाह नहीं करुँगी' कहती हुई योगाग्नि में कूद पडी। इस प्रकार अग्नि देवता के पास पहुँचकर, उनकी देख - रेख में रहने लगी। अग्निदेव ने अपने संरक्षण में रहनेवाली इस 'वेदवती' को सीता के रूप में रावण के पास भेजकर, असली सीता को अपने पास रखा। उस समय की वेदवती अब आकाशराजू की पुत्री 'पद्मावती' के रूप में पैदा हुई।

श्रीनिवास से इन बातों को सुनकर माँ वकुलादेवी बहुत प्रसन्न हुई।

त्रेतायुग की बातों के अनुसार श्रीनिवास को पद्मावती से विवाह करना था। उनकी इच्छा के अनुसार, पद्मावती श्रीनिवास के विवाह के बारे में बात करने के लिए दूत बनकर माँ वकुलादेवी आकाशराजू के पास जाती है।

श्रीनिवास कल्याण

वैशाख शुद्ध दशमी, शुक्रवार के दिन पूर्वफल्गुणी नक्षत्र युक्त शुभमुहूर्त में विवाह का निर्णय किया गया।

श्रीनिवास की ओर से अष्टदिक्पालक आदि समस्त देवतागण पधारे। उस विवाह में केवल श्रीमहालक्ष्मी नहीं आयीं थीं। श्रीनिवास को

इस पर बहुत दुःख हुआ। उनके दुःख का कारण जानकर ब्रह्मादि देवताएँ सूर्य भगवान को बुलाया। कोल्हापुर जाकर महालक्ष्मी को बुलाने के लिए भिजवाए। सूर्य के साथ लक्ष्मीदेवी पधारी, भूलोक में अकेले रहनेवाले श्रीनिवास के विवाह की बात को सुनकर वे प्रसन्न हुई। वे स्वयं पास रहकर अपने स्वामी को 'दूल्हे' के रूप में सजाई। पद्मावती के साथ विवाह करवाई। आकाशराजू की राजधानी नारायणपुर में पद्मावती श्रीनिवास का कल्याण धूमधाम से रचाया एवं मनाया गया। बाद में श्रीनिवास ने बहुत ही मनाकी, पर लक्ष्मीदेवी कोल्हापुर लौट गयी।

कोल्हापुर की यात्रा

नवदम्पति का नूतन वैवाहिक जीवन कुछ समय तक सुखी रहा पर एक अव्यक्त अशान्ति बढ़ने लगी। श्रीनिवास ने सोचा कि इसका कारण लक्ष्मीदेवी का आगमन और फिर लौट जाना ही होगा। पद्मावती को माता वकुला के हाथों में सौंपकर स्वयं श्रीनिवास, लक्ष्मी को बुलाने के लिए कोल्हापुर क्षेत्र को निकल पडे।

आकाशवाणी

श्रीनिवास ने कोल्हापुर पहुँचकर लक्ष्मी देवी के दर्शन के लिए अनेक प्रत्यन किये लेकिन उनका दर्शन नहीं हुआ। लगभग दस वर्ष तक महालक्ष्मी के लिए कोल्हापुर में तपस्या की, अन्त में उन्हें एक अशरीरीवाणी सुनाई दी -

'हे! श्रीनिवास! यहाँ इस क्षेत्र में तुम्हें श्रीमहालक्ष्मी का दर्शन बिलकुल नहीं होगा! तुम वेङ्कटाचलक्षेत्र वापस लौट जाओ। इस पुण्यक्षेत्र

की दक्षिण दिशा में सुवर्णमुखी नदी के तट पर श्रीशुक महर्षि का आश्रम है, उस प्रान्त में एक पद्मसरोवर का निर्माण करवाओ। उस सरोवर के तट पर अगर महालक्ष्मी के लिए तपस्या करोगे तो, उनका दर्शन संभव होगा।'

श्रीनिवास की तपस्या

आकाशवाणी के वचनों से आश्चर्यचकित होकर श्रीनिवास शुक महर्षि के आश्रमप्रान्त पहुँचे। वहाँ पद्मसरोवर का निर्माण किया। उसके तट पर सूर्य भगवान की मूर्ति की प्रतिष्ठा भी करवाई। वहाँ श्रीनिवास ने श्रीमहालक्ष्मी के लिए निराहार रहकर बारह वर्षों तक घोर तपस्या की।

ब्रह्मादि देवतागण तथा, भृग महर्षि आदि ने श्रीमहालक्ष्मी के पास जाकर श्रीनिवास की तपस्या के बारे में बताया, लोक कल्याण के लिए बिना किसी देर के श्रीनिवास के पास पहुँचने की प्रार्थना की।

भृग महर्षि ने विनती की, और कहने लगे - 'हे माँ! आप तो संपत्ति देने वाली श्रीमहालक्ष्मी हो! आपका, श्रीनिवास का अनादर करना मेरा मत नहीं था। जगन्माता! लोक की कुशलता के लिए ऐसा करना पडा। फिर भी श्रीहरि के वक्षःस्थल पर पदाघात करना बहुत बडी भूल है! श्रीहरि की महिमा, आपकी असीम करुणा जगत् को बताना था, इसी संकल्प से मेरी इस गलती की क्षमा करो और श्रीनिवास के पास पहुँचो।'

लक्ष्मी ने वादा किया कि - 'हाँ मेरी इस भूल के कारण, अपने त्वरित्त निर्णय के कारण इतने हजारों साल उनसे अलग रहना पडा। अब मैं अपने स्वामी के पास अवश्य जाऊँगी।'

अलमेलुमंगा का अवतरण

एक बार, कार्तिक के महीने में, शुक्ल पंचमी, शुक्रवार के दिन, उत्तराषाढ़ नक्षत्र युक्त शुभप्रद विजय मुहूर्त में, श्रीमहालक्ष्मी, श्रीनिवास के सामने पद्मसरोवर में सहस्त्र दलों के स्वर्णकमल पर आसीन होकर अवतरित हुई। उस शुभवेला में चारों दिशाओं में मंगल नाद, शंखनाद, भेरी और मृदंग की आवाजें सुनाई पडीं।

स्वर्णकमल में, पद्मासनी, पद्महस्ता, पद्ममालांकृता, नित्य यौवनवती, शोभायमान श्रीमहालक्ष्मी, सोलह वर्ष की नवयुवती के समान अवतरित हुई।

स्वर्णकमल में, स्वर्णिम आभा से प्रकाशमान 'पद्मावती' की ब्रह्मादि देवता गण, भृगु नारद! तुम्बूरादि महर्षि जैसे अनेकों ने नाना प्रकार से स्तुति की।

अपने सामने इतने वर्षों के पश्चात् श्रीमहालक्ष्मी को प्रत्यक्ष देखकर श्रीनिवास ने प्रसन्न होकर अपने गले का कलहारमाला को निकालकर उसे पद्मावती के कण्ठ में डाला, तथा उनसे आलिंगन किया। उस समय फूलों की वर्षा हुई, देवदुंदुभियाँ बजने लगी। आध्यात्मिक चेतना के साथ उज्वल उस मंगलमयी शुभवेला में ब्रह्मादि देवताओं ने उनकी स्तुति की।

ऊँ नमश्रियै लोकधात्रै ब्रह्ममात्रे नमो नमः
नमस्ते पद्मनेत्रायै पद्ममुखै नमो नमः

प्रसन्न मुख पद्मायै पद्मकान्त्यै नमो नमः
नमो बिल्ववनस्थायै विष्णु पत्न्यै नमो नमः

विचित्र क्षौमधारिण्यै पृथुश्रोण्यै नमो नमः
पक्व बिल्व फलापीन तुंग स्तन्यै नमो नमः

सुरक्त पद्म पत्राभ करपादतले शुभौ
सुरत्नांगद केयूर कान्चीनूपुर शोभिते

यक्ष कर्दम संलिप्त सर्वांगे कटकोज्वले
मांगलयाभरणै श्चित्रैः मुक्तहारै र्विभूषिते

ताटंकै खतंस्तैश्च शोभमान मुखांभुजे
पद्महस्ते नमस्तुभ्यं प्रसीद हरिवल्लभे
ऋग्यजुस्साम रुपायै विद्यायै ते नमो नमः

प्रसीदास्मान् कृपादृष्टिपात्तै शलोकयाब्दिजे?
ये दृष्टास्ते त्वया ब्रह्मा रुद्रेंद्रत्वमं समाप्नुयूः

इस प्रकार अनेकानेक रूप में देवता गण की स्तुति पर, लक्ष्मीदेवी उनका संबोधन करती हुई कहने लगी - 'हे! भक्तजन! आपकी अर्चना, प्रार्थना से मैं प्रसन्न हुई। इस स्तोत्र पठन करते हुए जो बिल्व पत्रों से मेरी अर्चना करेंगे।, वे अपनी सुख संपत्ति, अधिकार वापस पा सकते हैं, इनके अलावा उनकी उन्नति भी होगी। यही नहीं धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष रूपी पुरुषार्थ की प्राप्ति भी होगी।

अनेकों वर प्रदान करती हुई पद्मावती ने कहा - 'मेरे जन्म स्थान इस पद्मसरोवर में जो शुभमुहूर्त्त की वेला में संकल्प कर स्नान के पश्चात् इस स्तोत्र का पठन करेगा, दीर्घायू के साथ, संपत्ति, तेजोमय सन्तान भी प्राप्त करेगा।'

सभी देवी, देवता परमानन्द के साथ साष्टांग प्रणाम करते हुए स्तुति की - 'माँ! जगन्माता! सुवर्णपद्म में अवतरित होने के कारण आपके पद्मजा, पद्मालया, पद्मासनी, पद्महस्ता, पद्मावती, अलमेलुमंगा ... आदि नामों से हम आपकी कीर्ति का गान करेंगे।

सबको वर प्रदान करने के बाद अलमेलुमंगा को श्रीनिवास ने आलिगन किया। तुरन्त वह दिव्यजननी अदृश्य होकर श्रीनिवास के वक्षःस्थल में ''व्यूहलक्ष्मी'' के रूप में स्थापित हुई। उस दिन से ''द्विभुजाव्यूहलक्ष्मी'' समान दोनों हाथों में पद्मों को धारण कर, पद्मासन में बैठी हुई मुद्रा में श्रीनिवास के हृदय स्थल पर दर्शन दे रही है। उनके वक्षःस्थल पर माता निवास करती है इसलिए ये स्वामी ''श्रीनिवास'' के नाम से प्रसिद्धि पाई।

बाद में ब्रह्मादि देवताएँ श्रीनिवास भगवान की प्रार्थना करते हुए माँगने लगे कि - 'स्वामी! श्रीनिवास! जगत् जननी पद्मावती आप ही के कारण अवतरित हुई है! आप से भेंट कर चुकी है। फिर इतनी अद्भुत घटना के स्थल में 'माँ' अर्चामूर्ति बनकर भक्तों को दर्शन अनुग्रहीत कर प्रसन्न करेंगी तो ठीक होगा न?'

तुरन्त स्वामी, जगन्माता दोनों ने एक साथ 'तथास्तु'! कहते हुए वर प्रदान किया। 'पद्मावती जिस कार्त्तिक शुक्ल पंचमी के दिन अवतरित हुई, उसकी स्मृति में हर वर्ष, कलियुगान्त तक वैभव के साथ उत्सव मनाये जायेंगे।' इसीलिए श्रीपद्मावती माँ के अवतरित इस तिरुचानूर क्षेत्र में 'स्वतंत्र वीरलक्ष्मी' के नाम से माँ विख्यात हुईं। जिस प्रकार तिरुमल में श्रीनिवास स्वामी के उत्सव मनाये जाते हैं, ठीक उसी प्रकार धूमधाम

से, वैभव के साथ तिरुचानूर में भी उत्सव मनाये जाते हैं। उसी समय, ब्रह्म ने पद्मसरोवर की आग्नेय दिशा में, शुकमहर्षि से अर्चामूर्तियाँ श्रीबलरामकृष्ण के समीप स्वंतत्रवीरलक्ष्मी (विरहलक्ष्मी) की मूर्ति की प्रतिष्ठा करवाई। यहाँ इस क्षेत्र में केवल साम्राज्ञी पद्मावती के लिए (श्रीनिवास के बिना) पांचरात्रागम पद्धति में स्वतंत्र रूप से उत्सव और शोभायात्रा का प्रबन्ध ब्रह्म ने करवाया। यही नहीं, पद्मसरोवर में पद्मावती माता के अवतरण तक अवभृथ मनाने के लिए ब्रह्म ने उत्सव आयोजित किये। अवभृथ के दिन यानि पंचमी के दिन, उत्सवों की परिसमाप्ती के समय तक, सुमुहूर्त्त की वेला में तिरुमल क्षेत्र से श्रीनिवास के कण्ठ से उतारी फूलमाला, हल्दी कुमकुम, वस्त्र, नैवेद्य आदि, श्रीशुकपुर के अलमेलुमंग पट्टण पहुँचाने के लिए शाश्वत प्रबन्ध कर दिये गए हैं।

इस प्रकार उस दिन के ब्रह्मोत्सवों की समाप्ति के बाद ब्रह्मादि देवता गण अपने अपने लोक के लिए चल दिए। श्रीनिवास वक्षःस्थल व्यूहलक्ष्मी के साथ तिरुमल क्षेत्र पहुँचे। तब तक तिरुमल में स्थित आकाशराजू की पुत्री पद्मावती (वेदलक्ष्मी) को श्रीनिवास ने 'व्यूह लक्ष्मी' में विलीन किया।

तिरुमल श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी साक्षात् सप्तगिरियों से उतरकर जहाँ तपस्या की, वह दिव्यस्थान 'तिरुचानूर' है। कुछ दिनों तक क्षीरपान करते हुए, और कुछ दिन निराहार रहकर, बारह वर्षों तक तपस्या कर, न केवल श्रीमहालक्ष्मी की दया के योग्य बने, बल्कि, श्रीनिवास ने इस क्षेत्र की महिमा को भक्तों तक पहुँचाया भी है।

उस दिन से माँ पद्मावती उधर तिरुमल क्षेत्र में श्रीनिवास के वक्षःस्थल में ''व्यूह लक्ष्मी' के रूप में, तिरुचानूर में अर्चामूर्ति के रूप में,

स्वतंत्र वीरलक्ष्मी, पद्मावती, अलमेलुमंगा आदि नामों से व्याप्ति पाकर भक्तों का उद्धार कर रही है, कटाक्ष कर रही है। भक्तों की इच्छाएँ पूरी कर, साथ-साथ अपने स्वामी से वरों को प्रदान करवाने वाली के रूप में वर प्रदायिनी बनकर अलमेलुमंगा के रूप में कृपा-कटाक्ष बरसा रही है।

हमें पता लगा कि साक्षात् श्रीवेङ्कटेश्वर की तपस्या पर साक्षात् श्रीमहालक्ष्मी तिरुचानूर के पद्मसरोवर में स्वर्ण पद्म में अवतरित हुई।

फिर ऐसे परम पवित्र पद्मपुष्करिणी की क्या किसी ने सेवा की तथा उद्धार पाया है? पापों को धो लिया है?

हाँ! इसके लिए उदाहरण स्वरूप इस गाथा के द्वारा हम जान सकते हैं।

पद्मसरोवर की महिमा

यह एक प्राचीन अद्भुत गाथा है!

तिरुचानूर के पद्मसरोवर की महिमा बताने के नेपथ्य में एक आश्चर्यजनक बात है।

किसी समय में कामबोज राज्य रहा करता था। वह संपत्ति के लिए प्रसिद्ध था। उसके यहाँ भरपूर फसल उगती थी। भुज बल संपन्न व्यक्ति उसके पास रहते थे। वह राज्य सकल विद्याओं तथा चौंसठ कलाओं के लिए विख्यात था। ऐसे सुसंपन्न काम्बोज राज्य में कभी 'शंखणु' नामक राजा शासन कर रहा था।

शंखणु महाराज, प्रजा का पालन पिता समान करता था। जितना पराक्रमी था उतना ही भोलाशंकर भी था। प्रजा की सुख सुविधा की

पद्मसरोवर - पंचमितीर्थ (चक्रस्नान) का दृश्य

स्नपन तिरुमंजनम् में श्रीपद्मावती मैय्या

पूछताछ किया करता था। समस्या जब भी उभरती, समाधान प्रस्तुत करता था। कोई कुछ भी कहे, उन बातों पर विश्वास करता था, बडी दया रखता था, कोई कुछ भी पूछे अवश्य देता था, वह महान दानी था।

सब पर विश्वास करना, सबकी बातें मानना, उस शंखणु की कमजोरी थी। इतनी कमजोरियों के साथ रहते वालों को कोई भी आसानी से धोखा दे सकता है। दिया भी! शखणु के साथ कुछ लोगों ने आसानी से विश्वासघात भी किया। इससे वह अपना राज्य खो बैठा। अन्त में उसको जंगलों में भटकना पडा।

यह लोक सहज बात ही है। भरोसेमंद को धोखा देना अति साधारण बात है। क्या ऐसे व्यक्ति को धोखा दे सकते हैं? यह न्याय है या अन्याय! ऐसी परंपरा जो संदेह भरा होता है, उसके लिए कोई जगह ही नहीं!

राजा की स्थिति को देखकर प्रजा दुःखित हुई, बेचारे, इससे अधिक क्या कर सकती है?

राज्य हारकर शंखणु अकेला रह गया। अपने अविवेक और भलाई पर चिन्तित रहा।

''अब पछताए होत क्या? चिडियाँ चुग गई जब खेत'' शायद इसका अर्थ यही होगा। लाचार होकर वह राजा अपनी पत्नी के साथ जंगल के लिए चल पडा। भीगी बिल्ली समान वनों में घूमता रह गया।

शंखणु अपनी स्थिति पर स्वयं दुःखित था। निराशा और अपनी लाचारी पर चिन्तित था। उठना, बैठना, खाना, सोना हर काम में चिन्तित

था। इस प्रकार दिन-रात घूमते रहने वाले शंखणु सोचने लगा, प्राणत्याग ही अब एक मात्र रास्ता रह गया है। इस विचार को तुरन्त अपनी पत्नी से कहा, बेचारी, वह गृहणी जोर से रोने लगी, करोडों देवताओं की प्रार्थना अपनी रक्षा के लिए करने लगी। जोर से चिल्लाती रोती हुई प्रार्थना करती है, 'हे! स्वामी! गोविन्दा! हे आपन्नरक्षक! मेरा उद्धार करो!' बुजुर्ग कहते हैं - आर्द्रता के साथ बुलाए तो भगवान अवश्य सुनता है, दयामय भगवान ने शायद सुन लिया हो। ठीक उसी समय वहाँ से कुछ सज्जन जाते हुए दिखाई पडे। साधुजन, तेजस्वी लग रहे थे। कोई मुनीश्वर थे! शंखणु दम्पति उन ऋषियों के पैरों पर गिर पडी। अपनी रक्षा और अपने मार्गदर्शन के लिए विनती की। उस राजदम्पति के दुःख की गाथा को सुनकर ऋषिगण अनेक रूपों से उनकी कुण्डली की परीक्षा की। कहने लगे - 'हे राजदम्पति! आजकल आपकी ग्रहस्थिति ठीक नहीं है। इसलिए ये कष्ट उठाने पड रहे हैं। ये सदा तो नहीं रहेगे! कष्ट के समय जगलों में भटकने के बदले पुण्यक्षेत्रों का दर्शन करना श्रेयस्कर होगा। तीर्थ स्थानों की नदियों में डुबकी लगाइए। वहाँ के क्षेत्र देवता की आराधना कीजिए। तब आपके कर्मों की परिपक्वता कम होगी। फिर आपका राज्य आपको प्राप्त होगा देरी मत कीजिए, जाइए, क्षेत्र दर्शन, तीर्थ स्नान कीजिए। आपकी भलाई होगी!' इस प्रकार आशीर्वाद देते हुए ऋषिपुंगव आगे चले गये।

फिर क्या? उन महान व्यक्तियों का संदर्शन, वार्त्तालाप से उनके मन को तसल्ली मिली। उनकी आज्ञा के अनुसार क्षेत्र - दर्शन के लिए चल पडे। श्रीरंगम्, मदुरा, कन्याकुमारी, पलनी, तिरुत्तणि, कन्ची ... इस

प्रकार अनेक क्षेत्रों का दर्शन करते हुए, वहाँ के तीर्थों में नहाते हुए वहाँ की देवताओं का दर्शन करते हुए अन्त में वेङ्कटाचल पर्वत श्रेणी पहुँचे।

वहाँ पास में स्थित दक्षिणकाशी, जो स्वर्णमुखी नदी के किनारे पर जो श्री कालहस्तीश्वर क्षेत्र है उसका दर्शन किये। उस नदी में संकल्प कर नहाये, श्रीज्ञानप्रसूनाम्बा युक्त श्रीकालहस्तीश्वर का दर्शन कर, विश्राम किये।

उस समय वहाँ एक महान व्यक्ति उनके समीप पहुँचकर यों कहने लगा - 'हे राजदम्पति! यहाँ अति समीप स्वर्णमुखी नदी के तट पर एक अद्‌भुत सरोवर है, उस सरोवर में श्रीवेङ्कटेश्वर की इच्छा पर साक्षात् श्रीमहालक्ष्मी सहस्रदल वाले स्वर्णकमल में अवतरित हुई है। जगन्माता उसी सरोवर के किनारे पर 'पद्मावती', 'अलमेलुमंगा' नाम से विख्यात है, उनका दर्शन होगा। आप दोनों वहाँ जाइए। उस पद्मसरोवर में स्नान कीजिए! माँ अलमेलुमंगम्मा का दर्शन और प्रार्थना कीजिए।

'श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी की दया की प्रतिमूर्ति ही वे जगन्माता हैं। आप की प्रार्थना वे सुनेंगी, आपका उद्धार होगा, जाइए' कहते हुए आशीर्वाद देकर वह महात्मा अदृश्य हो गया।

उस कालहस्तीश्वर क्षेत्र में व्यक्त उस महान व्यक्ति के संदेश का स्मरण करते हुए वे दोनों शुक महर्षि प्रान्त के पद्मसरोवर पर पहुँचे।

उस दिव्य सरोवर पद्मों से भरा था। उन पर भ्रमर झंकार कर रहे थे, अत्यंत मनोहर उस पद्मसरोवर का निर्माण साक्षात् श्रीनिवास ने किया है। यही नहीं, स्वामी ने श्रीमहालक्ष्मी की कृपा के लिए, दर्शन के लिए, उस सरोवर के किनारे पर बारह वर्षों तक तपस्या की। कुछ समय तक

केवल दूध स्वीकारते हुए, कुछ समय तो निराहार रहकर श्रीमहालक्ष्मी मंत्र जप करते हुए तपस्या करते रहे उस पद्मसरोवर में कार्तिक शुद्ध पंचमी के दिन स्वर्ण कमल में लक्ष्मी देवी अलमेलुमंगा के रूप में अवतरित हुई। उस प्रकार पद्म में अवतरित होने के कारण ही वे जगन्माता 'पद्मावती', 'अलमेलुमंगा' कहलायी, फिर वेङ्कटेश्वर के पास पहुँची। यही नहीं, ब्रह्मादिदेवताओं की इच्छा के अनुसार वे वहाँ पद्मासनी बनकर अर्चामूर्ति के रूप में दर्शन दे रही है। इस प्रकार शंखणु राजदम्पति आपस में बातचीत करते हुए, उस पद्मसरोवर को प्रणाम करते हुए, उसमें डुबकी लगायें। संकल्पपूर्वक भक्ति के साथ प्रणाम करते हुए, स्नान किया। अलमेलुमंगा का दर्शन किये। उस प्रसंग में माँ पद्मावती, वेङ्कटेश्वर जी का सहस्र विधाओं में उन दोनों ने प्रार्थना की।

तिरुपति के आर. टी. सी. बस निगम से मंगपट्टण के लिए हर पाँच मिनिट पर बसें चलती हैं। इतना ही नहीं, ऑटोरिक्क्षा से बीस मिनिट में तिरुचानूर पहुँच सकते हैं।

पद्मसरोवर

तिरुचानूर पहुँचते ही, चतुरश्राकार में विशाल पद्मसरोवर हमें दर्शन देता है। पुण्यतीर्थजलों के साथ, दर्पण के समान चमकते हुए, समृद्ध पानी से, सुन्दर दिखाई देते हुए पद्मपुष्करणी हमें प्रसन्न कर देता है।

उत्तरी किनारे पर बडे बडे बरगद, पीपल के वृक्षों की छाया, उसी प्रकार आसपास के भवनों के प्रतिबिम्बों को अपने में समाकर, मनोहर दृश्यों से दर्शन देनेवाली उस सरोवर के सुन्दर दृश्यों का वर्णन अक्षरों के माध्यम से करना कठिन है, प्रत्यक्ष रूप से देखकर ही आनंद उठाना होता है।

पद्मसरोवर (तिरुचानूर)

श्रीपद्मावती मैय्या - चक्रस्नान से पूर्व

इस पुष्करिणी के ठीक बीच में, श्रीचक्रम् के समान, वह देखो, पानी में तैरते हुए उस प्रतिबिम्ब 'नीराली मण्डप' को। आध्यात्मिक कान्ति के साथ प्रकाशित वह पद्मसरोवर के अन्दर वह नीराली मण्डप, उस समय संतोष के प्रतीक समान, आनंदनिलयवासी की सम्राज्ञी पद्मावती के अवतरित उस दिव्य स्थान के संकेत में खडी वह जगह देखो!

तिरुमल वेङ्कटेश्वर जी स्वयं सप्तगिरियों से उतर कर इतनी दूरी पर इस पुष्करिणी का निर्माण किया। इसमें देवलोक से लाये गये पद्मों की स्थापना उन्होंने करायी थी। सभी पद्म हमेशा खिले रहें, इसके लिए सूर्य भगवान की वहीं स्थापना की। यह मंदिर पुष्करिणी की उत्तरी तट पर है, जिसका दर्शन कर सकते हैं।

श्रीसूर्यनारायण स्वामी का मंदिर (तिरुचानूर)

तिरुचानूर क्षेत्र में अति प्राचीन समय में ही श्रीसूर्यनारायण स्वामी का मंदिर बना है। पद्मसरोवर की उत्तरी सीमा पर लगभग २० कदम की दूरी पर पश्चिमी दिशा की ओर मुख कर इस मंदिर का निर्माण हुआ है।

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् के आधीन स्थित इस मंदिर के सूर्यभगवान की लम्बी श्याम वर्ण की शिलामूर्त्ति की स्थापना, पुराणों के अनुसार माना जाता है कि श्रीवेङ्कटेश्वर जी के द्वारा हुई है।

श्रीवेङ्कटेश्वर, श्रीमहालक्ष्मी की कृपा के लिए कोल्हापुर क्षेत्र गये लेकिन वहाँ उनका दर्शन नहीं हो पाया, इतने में एक अशरीरी वाणी यूँ सुनाई दी -

''हे! श्रीनिवास! यहाँ तुम्हें महालक्ष्मी का दर्शन नहीं होगा, वेङ्कटाचल के समीप स्वर्णमुखी नदी के किनारे एक पद्मसरोवर का निर्माण कर, वहाँ

श्रीमहालक्ष्मी के लिए तपस्या करो, तुम्हारी अभिलाषा की पूर्ति होगी।'' तब तुरन्त श्रीनिवास वहाँ पहुँचे। पहले सरोवर की स्थापना की। उसमें पद्मों को देवलोक से मँगवाकर लगवाये। सदा विकसित रखने के लिए कमलबान्धव श्रीसूर्य की स्थापना की। लगभग 12 वर्षों तक तीव्र तपस्या की, तो महालक्ष्मी उसी सरोवर में सहस्रदलों के स्वर्ण कमल में ''अलमेलुमंगा'' के रूप में अवतरित हुई।

उसी कारण से यह भास्कर क्षेत्र उस समय का अति प्राचीन मंदिर माना जाता है। मुख मण्डप, अर्धमण्डप, गर्भालय आदि इस मंदिर के भाग हैं।

पश्चिम की दिशा के इस मुखमण्डप में उत्तरी दीवार पर, प्रवेश द्वार की बाईं ओर जमीन से लगी एक अभिलेख है। उस पर लिखित शिला शासन में, नये मंदिर में निर्मित श्रीसूयनारायण स्वामी की मूर्ति की स्थापना की बात है। उस पर इस प्रकार लिखा हुआ है -

''स्वस्तिश्री जयाभ्युदय शालिवाहन शकम् 1788 के अगुनेटि अक्षयनाम वर्ष के निज ज्येष्ठ शुद्ध नवमी, एकादशी, उसके समान 1866 वर्ष के अप्रैल महीने के 23 तारीख के दिन श्रीहरिगुरु भक्ति परायण महाराजश्री हाथीरामजी के मठ श्रीमहंत सेवादासजी के शिष्य धर्मदासजी महंत द्वारा निर्मित नये देवस्थानम् में श्रीसूर्यनारायण स्वामी की मूर्ति की स्थापना हुई है।'' ''शुभमस्तु''।

उपरोक्त शिलालेख से मालूम पडता है कि नये मंदिर का निर्माण हुआ है। पर उसमें स्थित श्रीसूर्यनारायण स्वामी की मूर्ति नया है या पुराना, इस विषय की स्पष्ट जानकारी प्राप्त नहीं है।

जो भी हो, माना जा सकता है कि कालान्तर में श्री क्षेत्र के प्राचीन श्रीसूर्यनारायण स्वामी के मंदिर का अक्सर पुनरुत्थान किया जा रहा है।

मुखमण्डप पार कर अन्दर प्रवेश करते ही एक विशाल, लम्बा अर्धमण्डप दिखाई देता है। यह अर्धमण्डप गर्भालय के लिए प्रदक्षिणा मार्ग समान प्रयोजनकारी है। भक्तजन अर्धमण्डप में खडे होकर गर्भालय के सूर्य भगवान का दर्शन कर सकते हैं।

अर्धमण्डप में उत्तर की दिशा में प्रदक्षिणा के लिए जो रास्ता बनाया गया है इसमें $8^1 \times 8^1$नाप के गर्भालय में पश्चिमी मुख पर श्री सूर्यनारायण स्वामी की लम्बी शिला मूर्ति की स्थापना हुई है। द्विभुजी रूप में शोभायमान श्रीस्वामी अपने दोनों हाथों में कमल धारण किये हैं। मूर्ति में ही मुकुट, कण्ठाहार, यज्ञोपवीत, करकंकण आदि बनाये गये हैं। पद्मपीठ पर खडे स्वामी की मूर्ति पर ही कमर से लेकर चरणों तक अंगवस्त्र (धोती) बनायी गयी है। पैरों पर कडियाँ भी हैं। गर्भालय पर एक कलश शिखर निर्मित है। इस मंदिर का पुनरुत्थान तो हुआ, नया दिखता है पर मंदिर के शिला से बने खंभे, मूलमूर्त्ति आदि की जाँच करेंगे तो ये प्राचीन लगते हैं।

इस गर्भालय में दिखाई देनेवाली मूलविराट के साथ लगभग 3.5 कदम के लम्बे श्रीसूर्यनारायण स्वामी की पंचधातु की उत्सवमूर्त्ति और 1.5 कदम की भोगमूर्त्ति की प्रतिमायें ठीक मूलविराट के नकल लगते हैं।

इस मंदिर में न ध्वजस्तंभ है और न ही बलिपीठ है। वैखासन शास्त्र पद्धति के अनुसार पूजादि आयोजित इस स्वामी को हर दिन तीनों बार अर्चना और निवेदन होते हैं।

हर रविवार प्रातः 6 बजे श्रीसूर्यनारायण स्वामी की मूल मूर्त्ति का अभिषेक किया जाता है। इस अभिषेक में क्रमशः गाय का दूध, दही, शहद, नारियल का पानी, चंदन आदि पदार्थों का उपयोग करते हैं। अभिषेक के बाद चीनी से बने क्षीरान्न का निवेदन करते हैं। इस अभिषेक के समय निर्णय के अनुसार रकम भरकर भक्त गण पूजा में भाग ले सकते हैं।

इतना ही नहीं, श्रीसूर्यनारायण स्वामी के अवतार नक्षत्र, यानि हस्ता नक्षत्र के दिन, मास में एक बार, स्वामी की उत्सवमूर्त्ति का एकान्त अभिषेक आयोजित कर क्षीरान्न का निवेदन करते हैं। संध्या समय को तिरुचानूर की वीथियों में श्रीसूर्यनारायण स्वामी की उत्सवमूर्त्ति को पालकी में बिठाकर ग्रामोत्सव (शोभायात्रा) किया जाता है।

वर्ष के प्रधान पर्व दिनों में, यानि मकर संक्रमण के दिन, रथ सप्तमी के दिन, श्रीसूर्यनारायाण स्वामी की मूलमूर्त्ति, उत्सव मूर्त्ति दोनों का धूमधाम से अभिषेक, अर्चना, निवेदन आदि मनाये जाते हैं। शोभायात्रा निकाली जाती है।

हर वर्ष धर्नुमास के महीने भर प्रातःकाल ठीक 5 बजे पूजादि कर क्षीरान्न का निवेदन होता है।

श्रीनिवास के अवतार की कथा घटना में सूर्य भगवान की अत्यंत प्रधानता है।

श्रीसूर्यभगवान, आकाशराजू की पुत्री से जब श्रीनिवास ने विवाह किया तो, कोल्हापुर महालक्ष्मी, और श्रीनिवास के बीच संयोजक का कार्य किया है। श्रीस्वामी के आदेशानुसार ही सूर्य, कोल्हापुर पहुँच कर श्रीमहालक्ष्मी का स्वागत कर उन्हें बुला लाया था।

उसी प्रकार तिरुचानूर में स्वयं श्रीवेङ्कटेश्वर जी से श्री सूर्यनारायण स्वामी की स्थापना हुई है। श्रीनिवास की इच्छा के अनुसार पद्मसरोवर में हमेशा सुवर्ण कमल खिले रहें, यह कार्य स्वयं श्रीसूर्य भगवान चलाते हैं। इसके द्वारा श्री महालक्ष्मी सहस्त्र दलों के स्वर्ण कमल में अलमेलुमंगा के रूप में, पद्मावती के रूप में अवतरित होने के लिए आप ही कारणभूत है। उस दिन से तिरुचानूर भास्कर क्षेत्र के रूप में प्रसिद्ध हुई है।

तिरुचानूर श्रीपद्मावती माता के साथ, तिरुमलेश द्वारा प्रतिष्ठित और अर्चना की गई श्रीसूर्य नारायण मूर्त्ति का दर्शन करना भक्तों के लिए कल्याणकारी होगा और उनकी तिरुमल यात्रा संपूर्णतया फलप्रद भी होगा।

आदिदेव! नमस्तुभ्यं
प्रसीद मम भास्करा!
दिवाकर! नमस्तभ्यं
प्रभाकर नमोस्तु ते!!

*** * ***

श्रीपद्मावती माँ का आलयप्रांगण

उत्तरीदिशा पर सात स्वर्णकलशों के साथ गंभीरता से दिखाई देने वाला राजशिखरद्वार के भीतरी आंगन में सामने ही जो मंदिर है वह श्री कृष्ण स्वामी का मंदिर है। इस मंदिर की दक्षिणी सीमा पर श्री सुन्दरराज स्वामी मंदिर, उत्तरी सीमा पर श्रीपद्मावती का मंदिर है। इन मंदिरों में

पांचारात्रागम पद्धति के अनुसार दिन में तीनों समय पर पूजा, निवेदन आदि आयोजित होती हैं।

श्रीपद्मावती माँ का मंदिर

श्रीपद्मावती माँ के मंदिर को प्रधानतः छः भागों में विभाजित कर देख सकते हैं।

आशीर्वाद मण्डप :

ध्वजस्तंभ मण्डप की उत्तरी दिशा में लगभग चार फुट की लम्बी शिला पर निर्मित सोलह पत्थर के खम्भों का मण्डप ही ऊंजल मण्डप है। बहुत पहले, इस मण्डप के मध्य स्थित मंच पर ही माँ अलमेलुमंगा का डोलोत्सव मनाया जाता था। आजकल प्रातः काल और संध्या समय यहाँ विभिन्न वाद्य बजाये जाते हैं।

और यही नहीं, माता के दर्शन के वेद प्रमुख यहाँ इस मण्डप में बैठकर तीर्थप्रसाद स्वीकारते हैं।

ध्वजस्तंभ मंडप :

एक पंक्ति में छः स्तंभों के हिसाब से छः पंक्तियों में कुल 36 शिला स्तंभों के साथ ऊँचे मंडप के मध्य स्वर्ण बलिपीठ, उसकी पश्चिमी ओर एक स्वर्ण ध्वज स्तंभ रहने के कारण इस मण्डप को ध्वयस्तंभ मंडप कहते हैं।

जगन्माता के नैवेद्य के बाद दिन में तीनों बार अन्त में मंदिर में स्थित भूतगणों को शुद्धान्त बलिपीठ पर समर्पित करते हैं। इसलिए बलिपीठ स्थापित है। इससे सटकर एक लंम्बा सोने का ध्वजस्तंभ है। माँ के ठीक

सामने इस खम्भे के निचेल भाग में पश्चिमी मुख के साथ गजवाहन, उत्तर और दक्षिणी दिशाओं पर शंखचक्र, उत्तर की दिशा पर श्री पद्मावती माँ की प्रतिमा, इस प्रकार चारों ओर ध्वजस्तंभ पर अंकित है।

हर साल कार्त्तिक महिने के समय आयोजित ब्रह्मात्सवों के आरंभ में इस सोने के ध्वजस्तंभ पर गजपताक फ़हराते हैं। ब्रह्मोत्सवों के अन्त में इस ध्वज का अवरोहण करते हैं।

कल्याणोत्सव मण्डप :

जगन्माता के ध्वजस्तंभ मंडप की दक्षिणी ओर, श्रीबलरामकृष्ण स्वामी के मंदिर के सामने की ओर स्थित कल्याण मण्डप में हर दिन प्रातः 10.30 बजे श्रीपद्मावती, श्रीनिवास का कल्याणोत्सव मनाते हैं।

मुखमण्डप :

श्रीपद्मावती के प्रधान मंदिर के सामने लोहे के ग्रिल के बीच चार स्तंभों के मध्य ऊँचा शिला मंच के साथ स्थित मण्डप ही मुखमंडप है। श्रीपद्मावती माता का इस मण्डप में आस्थान, दरबार चलाते हैं।

अर्धमण्डप :

मुखमण्डप पारकर अन्दर चलेंगे तो अर्धमण्डप आता है। यह गर्भालय के लिए प्रदक्षिणा मण्डप के समान भी उपयोगी है। इस अर्धमण्डप में गर्भालय के सामने दक्षिण की ओर उत्तरी मुख किये शिला के खाने में सुदर्शन भगवान का, विष्वकसेन जी की पचंधातु मूर्त्तियाँ हैं। इनके साथ विष्वकसेन जी और गरुड की शिलामूर्त्तियाँ भी स्थापित हैं। उसी प्रकार उत्तरी दिशा पर दक्षिण की ओर मुख कर शिला से बने खाने में श्रीभगवद्रामानजु जी की शिला मूर्त्ति के साथ, उनकी पंचधातु मूर्त्ति भी प्रतिष्ठित है।

अन्तराल :

अर्धमण्डप पार कर भीतर पहुँचने पर स्थित मण्डप ही अन्तराल मडंप है। इस अन्तराल के प्रवेशद्वार के दोनों ओर माँ की सेविकाएँ वनमालिनी, बलाकिनी पहरा देती रहती हैं।

इस अंतराल में माँ श्रीपद्मावती की पंचधातु उत्सवमूर्त्ति के साथ साथ श्रीपद्मावती श्रीनिवास की भोगमूर्त्तियाँ भी विराजमान हैं।

गर्भालय :

अन्तराल को पार करने के बाद गर्भालय के मध्य पद्मपीठ पर, बैठी हुई मुद्रा में माँ श्रीपद्मावती की शिलामूर्त्ति प्रतिष्ठित हैं।

चतुर्भुजी माता के ऊपरी दोनों हाथों में पद्म हैं। नीचे दाहिने और बाई हाथों में क्रमशः अभय, वरद मुद्राओं के साथ दर्शन देती हैं।

'अलमेलुमंगा' के नाम से विख्यात माता पद्मावती की मूलमूर्ति का हर दिन प्रातःकाल में सुप्रभात सेवा, सहस्त्रनामों के साथ कुंकुमार्चन, तथा निवेदन समर्पित किये जाते हैं। सर्वदर्शन वेला में सभी भक्तगण माता की 'कुंकुमार्चना' कर सकते हैं। हर सोमवार 'अष्टदलपाद पद्माराधना'', हर गुरुवार 'तिरुपावडसेवा', हर शुक्रवार को 'अभिषेक', हर शनिवार को पुष्पांजलि सेवा माँ की मूलमूर्ति को समर्पित होती हैं।

शान्तिनिलय विमान :

श्रीपद्मावती माता के गर्भालय के ऊपर ''शान्तिनिलय विमान'' नामक सोने के कवच के साथ एक कलश शिखर निर्मित है। इस स्वर्ण विमान पर अष्ट लक्ष्मियों की मूर्त्तियाँ आठों दिशाओं में प्रतिष्ठित होने

के कारण इन अष्टलक्ष्मियों के समन्वय का समाहर रूप ही अलमेलुमंगा है। यह स्पष्ट है कि यही माँ सभी इच्छाओं की पूर्ति करनेवाली साक्षात् श्रीमहालक्ष्मी है।

शान्तिनिलय विमान के वायव्य कोने पर ''विमानलक्ष्मी'' के रूप में शोभायमान होकर दर्शन देने वाली माता ही अलमेलुमंगा है। इस शान्तिनिलय पर स्थित ''विमान पद्मावती'' का दर्शन ऐसा लगता है कि वे तिरुमलगिरी की ओर देखती हुई श्रीनिवास का स्मरण दिला रहीं हो।

माँ पद्मावती का पाँचरात्रागम के अनुसार साल भर नित्योत्सव, वासेत्सव, मासोत्सव, संवत्सरोत्सव, आदि नाना प्रकार के उत्सव वैभवपूर्ण पद्धति से मनाये जाते हैं। तिरुमल के यात्रियों के साथ, भक्त गण के साथ माँ पद्मावती का मंदिर सदा चहलपहल के साथ भासित रहता है।

माता श्रीपद्मावती के उत्सव

तिरुचानूर के दिव्य क्षेत्र में पावन पद्म सरोवर के पुण्य जल से स्वर्ण सहस्त्र दल पद्म में अविर्भूत अलमेलुमंगा, 'पद्मावती' नाम के साथ ''स्वतंत्र वीरलक्ष्मी'' के नाम से विख्यात है।

जिस प्रकार तिरुमल स्वामी का वैखानसागमशास्त्र पद्धति में षट् अर्चनाएँ, उत्सव, शोभायात्रा मनाये जाते हैं, ठीक उसी प्रकार तिरुचानूर की साम्राज्ञी माँ श्रीपद्मावती की भी पाँचरात्रागम शास्त्र रीति में 'स्वतंत्र वीरलक्ष्म्याराधना' नाम से नित्याराधना, उत्सव, शोभा यात्रा धूमधाम से मनाये जाते हैं। श्रीनिवास की महाराज्ञी पद्मावती का तिरुमलेश के समान स्वंत्रत्र जो सेवाएँ की जाती है, उनका संक्षिप्त विवरण अब प्राप्त करेंगे।

नित्योत्सव :

हर दिन विधि विधान से जो कार्यक्रम चलते हैं उन्हें नित्योत्सव कहते हैं। हर दिन प्रातः सुप्रभात सेवा से प्रारंभ होकर, क्रमशः श्रीपद्मावती मूल मूर्ति की सहस्रनामार्चना, तदुपरांत निवेदन चलते हैं। 'पद्मावती परिणय' नाम से श्रीपद्मावती श्रीनिवास का नित्य कल्याणोत्सव, हर संध्या समय में माँ को डोलोत्सव (ऊंजलसेवा) समर्पित होता है। रात में 'एकान्तसेवा' के साथ मंदिर के कार्यक्रम परिसमाप्त होते हैं। सर्वदर्शन वेला में भक्तजन माँ की मूलमूर्त्ति की कुंकुमार्चना करवा सकते हैं।

सप्ताहोत्सव :

सप्ताह में एक दिन विशेष रूप से एक उत्सव मनाते हैं। इन सेवाओं में भक्तगण निर्णीत रकम भरकर भाग ले सकते हैं। सोमवार - अष्टदलपाद पद्माराधना, गुरुवार - तिरुप्पावडा (अन्नकूटोत्सव) मूलविराट के लिए समर्पित करते हैं।

अभिषेक :

हर शुक्रवार को माँ की मूलमूर्ति का अभिषेक आयोजित होता है।

लक्ष्मीपूजा :

हर शुक्रवार कल्याणोत्सव के पहले कल्याण मण्डप में 'लक्ष्मीपूजा' आयोजित होती है।

वनोत्सव :

हर शुक्रवार नित्य कल्याण के पश्चात् माँ पद्मावती के मंदिर की दक्षिणी दिशा पर स्थित शुक्रवार के वन में पहुँचकर मध्याह्न के तीन बजे

को इस वन में हल्दी, चन्दन आदि पदार्थों से अभिषेक करते हैं। इस अभिषेक में भक्तजन भाग लेकर दर्शन कर सकते हैं।

ऊँजलसेवा :

हर दिन आस्थानमण्डप में ऊँजलसेवा की जाती है, इस सेवा के पश्चात् केवल शुक्रवार को ही शोभायात्रा की जाती है।

पुष्पांजलि सेवा :

हर शनिवार प्रातः 6.30 बजे को पुष्पांजलि सेवा में, कमलों से मूलमूर्ति की पुष्पार्चना की जाती है।

नक्षत्रोत्सव :

हर महीने उत्तराषाढ़, तथा एकादशी के दिनों में माँ की उत्सवमूर्ति का एकांत में अभिषेक किया जाता है। उत्तराषढ़ नक्षत्र के दिन संध्या समय में श्रीपद्मावती माँ का गजवाहनोत्सव मनाया जाता हैं।

वार्षिकोत्सव :

हर साल युगादि पर्व के दिन उत्सवों का प्रारंभ होता है। मंदिर के मुखमण्डप में युगादि के दिन पंचागश्रवण होता है।

वसंतोत्सव :

वैशाखी महीने की पूर्णिमा से तीन दिनों के पहले से पद्मावती के वसंतोत्सव मनाये जाते हैं। आखिरी दिन, पूर्णिमा के दिन स्वर्णरथोत्सव मनाते हैं।

प्लवोत्सव :

ज्येष्ठ मास की पूर्णिमा के पहले पाँच दिनों तक प्लवोत्सव मनाते हैं। पहले दिन एकादशी को श्रीकृष्ण स्वामी का, द्वादशी यानि दूसरे दिन श्रीसुन्दर राज स्वामी का, अन्तिम तीन दिनों में श्रीपद्मावती माँ का पद्मपुष्करिणी में नावोत्सव मनाया जाता है।

पवित्रोत्सव :

हर साल भाद्रपद के महीने की पूर्णिमा के पहले तीन दिनों तक पवित्रोत्सव आयोजित होते हैं।

ब्रह्मोत्सव :

हर वर्ष कार्त्तिक मास की शुद्ध पंचमी तक, यानि इसके दस दिन पहले से ब्रह्मोत्सव धूमधाम से मनाये जाते हैं। हर दिन प्रातः और संध्या, को दोनों समय महाराज्ञी श्रीपद्मावती की वाहन सेवाएँ की जाती हैं।

अन्तिम दिन, पंचमी के दिन पद्मसरोवर में सैकडों भक्तों के बीच पंचमीतीर्थ से ब्रह्मोत्सव समाप्त होते हैं।

पुष्पयज्ञ :

ब्रह्मोत्सवों की समाप्ति के अगले, दिन यानि श्रवणा नक्षत्र के दिन, मंदिर में ही माता पद्मावती का नाना प्रकार के सुगंधित पुष्पों से 'पुष्पयज्ञ' धूमधाम से मनाते हैं।

त्रैमासिक मुख्य पूजाएँ :

हर वर्ष पुष्यमास (त्रैमास के छटे महीने) में हर शुक्रवार को माँ की विशेष पूजाएँ की जाती हैं। सुहागिन स्त्रियों को हल्दी धागे प्रसाद के रूप में बाँटी जाती हैं।

भगवान श्रीनिवास की हृदयसम्राज्ञी पद्मावती माता, अर्चामूर्ति के समान अवतरित तिरुचानूर क्षेत्र, में अनेक प्रकार के उत्सवों से, शोभा यात्राओं के साथ वर्ष भर के लिए जो मनाए जाते हैं, उनके वर्णन असंभव है ही। तिरुमल के दर्शन के पहले हर भक्त को पद्मसरोवर का दर्शन, स्पर्श, स्नान आदि का आचरण अवश्य करना चाहिए। पश्चात्, श्रीपद्मावती माता का दर्शन कर, तिरुमल की यात्रा करेंगे तो समझना चाहिए कि उनकी यात्रा पूर्वक सफल पूरा हुआ है।

मातस्समस्त जगतां मधुकैटभारेः
वक्षोविहारिणि मनोहर दिव्य मूर्त्ते
श्री स्वामिनी श्रितजन प्रियदान शीले
श्री वेङ्कटेशदयते तव सुप्रभातम्

* * *

तिरुचानूर श्रीबलरामकृष्ण स्वामी मंदिर (अलगिय पेरुमाल)

तिरुचानूर श्रीपद्मावती मंदिर के प्रागंण में अति प्राचीन श्री बलरामकृष्ण स्वामी का मंदिर स्थित है। यह पद्मावती मंदिर की दक्षिणीदिशा में, श्रीसुन्दरराज स्वामी मंदिर की उत्तरी दिशा में, यानि दोनों मंदिरों के बीच थोडा सा निचले भाग में निर्मित है। श्रीकृष्णस्वामी मंदिर ठीक महाद्वार के आगे उत्तर की दिशा में मुख किये हुआ है जो अद्भुत है। सभी मंदिरों से तुलना करेंगे तो यह मंदिर अति पुरातन और अति मुख्य मंदिर है। यह कृष्ण स्वामी प्राचीनकाल के शिलालेखों में 'अलगिय पेरुमाल' कहा गया

है, अर्थात् 'सुन्दर भगवान' कहलाये। वहाँ के अर्चकस्वामियों का कहना है कि कृष्णस्वामी यहाँ के क्षेत्र पालक भी हैं।

प्रधान राजशिखर पार कर अन्दर पहुँचते ही सामने ही श्रीकृष्ण स्वामी का मंदिर दिखायी देता है। उपलब्ध प्राचीन शिलालेखों के अनुसार 'अलगिय पेरुमाल' (सुन्दर भगवान) के नाम से बुलाये जाने वाले श्रीकृष्ण के बारे में तिरुपति, तिरुचानूर में लगभग यह शिलालेख प्राप्त है।

अन्वेषकों का मत है कि उनमें पहला जो शिलालेख है वह पाँचवें शासक के समय का राजराज चोल - 3 से सम्बन्धित है। यानि सन् 1221 समय का है, इस क्रम में अन्तिम शिलालेख ई. 1552 का है।

उपरोक्त शिलाशासनों के द्वारा जान पडता है कि श्रीकृष्ण स्वामी मंदिर का निर्माण ईं की 12 शताब्दी में हुआ था।

पोक्कीरन नामक भक्त ने स्वयं एक भूमि खरीदकर, फसल उगाकर, ऊर्वर भूमि बनाकर उसे मंदिर को दान में दिया। इसी रकम से मंदिर के आयोजक पोक्कीरन के नाम से पंगुनी उत्सव मनाते हैं।

इसके पश्चात् ई.के 1467 में विजयनगर राजा, सालुव नरसिंगरायलु ने आज्ञा दी कि रोज दो थालियाँ मक्खन से भरकर श्रीकृष्ण के पास भेजें। यही नहीं, एक शिलाशासन यह भी मिलता है कि सालुव नरसिंगरायजी ने स्वयं इस मंदिर को चंदा समर्पित की थी।

ई. के 1541 में अच्युतराय के समय में सात्तलूर श्रीनिवास अय्यंगार 2770 नार्पणों को इनाम के रूप में दिया था, इस रकम को

अन्य सेवाओं के साथ ब्रह्मोत्सवों के अत्तिम दिन जो अलगिय पेरुमाल को समर्पित दोसपडि सेवा होती है, उस के लिए उपयोग करते हैं।

ई.के 1552 में 3 पडिवेट्टै (पारुवेट) समय में श्रीकृष्ण को निवेदन में समर्पित करने के लिए रामराजकोदण्डराजा ने एक इनाम भी समर्पित की थी।

इतनी विशेषताओं से युक्त, श्रीपद्मावती मंदिर से भी प्राचीन श्रीकृष्ण स्वामी मंदिर चार भागों में निर्मित है। मुखमण्डप, स्नपन मण्डप, अन्तराल और गर्भालय इन चार भागों में इसका निर्माण हुआ है।

महामण्डप :

लगभग 24 फुट की ऊँचाई, लम्बाई से, उत्तर, दक्षिण और, पूर्व तीनों ओर खुले रखकर निर्मित इस महामण्डप में चार स्तभों के क्रम से चार पंक्तियों में यानि कुल 16 खम्भे निर्मित हैं। इनमें आग्नेय और ईशान्य कोनों के स्तंभ ही चोल शैली में निर्मित है, बाकी सभी पत्थर के खम्भों से बने हैं, जो स्थापत्य कुशलता विजयनगर शैली की मानी जाती है।

स्नपनमण्डप :

महामण्डप पार कर अन्दर जाने पर स्नपन मण्डप है। यह 24×8.6 की लम्बाई और चौडाई से भासित मण्डप है जो, लगता है कि यही असली मुख मण्डप है।

चार स्तभों के क्रम से दो पंक्तियों में पत्थर के खम्भे स्नपन मण्डप में हैं। हाल ही में उत्तरी और दक्षिणी दिशाओं में लोहे का ग्रिल, पूरब की

दिशा में दीवार बनाया गया है, इसलिये यह मुख्य स्नपन मण्डप जैसे बन गया है। लगता है कि यह पहले महामण्डप का एक हिस्सा ही रहा होगा।

अन्तराल :

स्नपन मण्डप के उस पार 'अन्तराल' है। इस 24'×5.5' लम्बाई, चौडाई से निर्मित अन्तराल में उत्तरी कोने में वायव्य की ओर श्री रुक्मिणी, सत्यभामा समेत श्रीवेणुगोपाल स्वामी की पंचधातु उत्सव मूर्त्तियों, पूर्व की ओर मुख कर मंच पर रखी गयी हैं। श्रीवेणुगोपाल स्वामी जी चर्तुभुजी हैं, ऊपरी दो हाथों में शंख, चक्र धारण कर, नीचे के दोनों हाथों से वेणु बजा रहे हैं। हर महीने के रोहिणी नक्षत्र के दिन इन उत्सवमूर्त्तियों के अभिषेक के बाद - संध्या के समय तिरुचानूर पुरवीथियों में शोभायात्रा निकाली जाती है।

हर वर्ष श्रीकृष्णाष्टमी - श्रीकृष्णजयंती (रोहिणी) पर्व के दिन इन उत्सवमूर्त्तियों की अभिषेकार्चना तथा शाम में शोभा यात्रा चलायी जाती है।

गर्भालय :

अन्तराल के बाद अंदर गर्भालय में पश्चिमी दीवार से सटकर पूरब की ओर मुख कर दो फुट शिला मंच पर श्रीकृष्ण की शिलामूर्ति प्रतिष्ठित है।

पूर्वी दिशा पर मुख कर पद्मासन में बैठे, दोनों हाथों को नीचे की ओर कर दोनों हाथों को वरद भंगिमा में कृष्णस्वामी अवतरित हैं। इस स्वामी के बगल में ही अन्य शिला मंच पर उत्तराभिमुखी श्रीबलराम की

शिलामूर्ति प्रतिष्ठित है। पौढ़ी पर दाहिने चरण को मोड कर बैठे हुए अपने बाहिने पैर नीचे डाले हैं। दाहिने हाथ को दाहिने पैर पर लगाए, बाये हाथ को जमीन पर रख ऐसे बैठे हैं मानो अपना थकान दूर कर रहे हों। दोनों पैरों में पादुकाएँ पहने हुए हैं। यहाँ बलराम, कृष्ण दोनों मूर्त्तियों के शिरों पर मुकुट शोभायमान हैं। यहाँ विराजमान बलरामकृष्ण संबंधित एकाध कथन इस प्रकार प्रस्तुत हैं -

कुरुक्षेत्र संग्राम के समय, दुःखित बलराम ने, उस युद्ध में न कौरव और न पाण्डवों के पक्ष लिया, वे क्षेत्राटन के लिए निकल पडे। अट्ठारह दिनों के युद्ध के बाद श्रीकृष्ण भगवान भाई को ढूँढ़ते हुए शुकमहर्षि के आश्रम पहुँचे। वहाँ शुकमहर्षि ने अपने आश्रम में आतिथ्य स्वीकारने की विनती की। उस शान्तपूर्ण वातावरण में श्रीकृष्ण 'हाँ' कहते हुए कुछ समय तक पद्मासन में बैठकर ध्यानस्थ रहे। इतने में क्षेत्र दर्शन कर, शुकमहर्षि आश्रम में ध्यान में लीन अपने भाई श्रीकृष्ण को देखकर बलराम अत्यंत प्रसन्न हुए। धूम, धम कर थके हुए बलराम अपनी पादुकाएँ भी न छोडते हुए पौढी पर, अपने भाई को देखने के आनंद में प्रसन्न बैठे रहे। कुछ देर बाद, आँखें खोलकर श्री कृष्ण ने बलराम को देखा तो प्रसन्न होकर बताने लगा - यह सप्तगिरी पर्वत प्रान्त का दिव्य क्षेत्र है, इतने बढ़कर पुण्य क्षेत्र और हो ही नहीं सकता है'', अपनी हथेली में उस दिव्य स्थल को बताते हुए, बलराम से विनती की कि अपना क्षेत्राटन अब समाप्त कर दें। बलराम ने माना और वर दिया कि शुकमहर्षि आश्रम में स्थित बलराम, कृष्ण का जो भी दर्शन करें, उन्हें समस्त तीर्थयात्रा का फल प्राप्त होगा। यह माना जाता है कि शुकमहर्षि ने इस घटना की स्मृति में उसी भंगिमा में बैठे बालराम की मूर्ति की स्थापना की है।

इस गर्भालय में नृत्यभंगिमा में स्थित बालक कृष्ण की पंचधातु प्रतिमा, और छोटी सी लक्ष्मी नरसिंह स्वामी की पंचधातु प्रतिमाएँ है।

गर्भालय के ऊपर दो सिरवाले विमान शिखर निर्मित है। विमान शिखर की चारों ओर तिरुमल आनंदनिलय विमान के समान सिंह निर्मित हैं। इस शिखर के ऊपर वेसरशैली से सम्बन्धित एक गोलाकार शिखर, उस शिखर पर सोने का एक कलश प्रतिष्ठित है।

श्री पद्मावती, और श्री सुन्दराजस्वामी मंदिरों के जैसे ही कृष्ण स्वामी मंदिर में भी पांचारात्रागम शास्त के अनुसार श्रीवैष्णव अर्चक स्वामियों के द्वारा अर्चना और आराधना की जाती है।

हर दिन तीन बार अर्चना, आराधना, निवेदन होते हैं पर श्रीपद्मावती माँ के मंदिर से कुछ समय पहले किये जाते है अर्थाद श्री कृष्णस्वामी के निवेदन के बाद ही पद्मावती मंदिर में निवेदन आदि होते हैं।

हर महीने के अष्टमी तिथि को श्रीबलराम कृष्ण की मूलमूर्त्तियों की अभिषेकार्चनाएँ विशेष ढ़ंग से मनाई जाती हैं।

उसी प्रकार रोहिणी नक्षत्र के दिन श्रीरुक्मिणी, सत्यभामा सहित श्रीकृष्ण स्वामी के अभिषेक आदि के बाद शाम को उत्सवमूर्त्तियों की शोभायात्रा तिरुचानूर गाँव में होती है।

हर साल सावन के महीने में श्रीकृष्णाष्टमी - रोहिणी नक्षत्र के दिन श्रीकृष्णस्वामी का अभिषेक अर्चनादि के बाद संध्या समय ग्रामोत्सव भी मनाया जाता है।

हर वर्ष जेठ के महीने की पूर्णिमा से पहले, पाँच दिनों तक तिरुचानूर पद्मावती माता का पद्मसरोवर में नावोत्सव मनाया जाता है। उसी के अन्तर्गत पहले दिन शाम के समय श्रीरुक्मिणी, सत्यभामा सहित श्रीकृष्णस्वामी की भी पद्मसरोवर में (तिरुचानूर पुष्करिणी) नावोत्सव आयोजित होता है। विद्युत दीपों के साथ शोभायमान, सुन्दर पद्मसरोवर में, और सुन्दर रूप से सुसज्जित प्लवन पर श्रीरुक्मिणी, सत्यभामा सहित श्रीकृष्णस्वामी पधारते है, पद्मसरोवर के पवित्रजलों में तीन बार प्रदक्षिणा पूर्वक विहरण कर भक्तों को दर्शन देकर कटाक्ष करते हैं।

तिरुमल के यात्री श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी की हृदयसाम्राज्ञी श्री पद्मावती के दर्शन के साथ-साथ उसी मंदिर के प्रागण में स्थित श्रीकृष्ण, बलराम के भी दर्शन कर समस्त तीर्थयात्रा के फल को संपूर्ण रूप से प्राप्त कर धन्य बनते हैं।

कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम्!!

*** * ***

श्रीसुन्दरराज स्वामी मंदिर

तिरुचानूर माता श्रीपद्मावती मंदिर के प्रांगण में दक्षिणी कोने में यानि श्रीकृष्ण स्वामी मंदिर की दक्षिणी दिशा में पूर्वीमुख में लगभग चार फुट के शिला मंच पर निर्मित मंदिर ही श्रीसुन्दरराज स्वामी का मंदिर है। उन मंदिर के स्वामी को, श्रीसुन्दरवरदराज स्वामी, या श्रीवरदराज स्वामी आदि नामों से भक्त बुलाते हैं। आजकल 'श्री सुन्दरराजस्वामी' नाम से यहाँ के भगवान प्रसिद्ध हैं।

इस मंदिर की प्रस्तावना शासनों में भी दिखाई देती है। ई. के 1541 के शासन में वरदराजस्वामी के रथोत्सव की प्रस्तावना भी प्राप्त है। उसी प्रकार 1547 के शासन भी उपलब्ध हैं। वरदराज स्वामी के ब्रह्मोत्सव, उन उत्सवों के अन्त में ''विदैयार्रि'' नामक परंपरा का उल्लेख मिलता है। यही नहीं अन्वेषकों का राय है कि इन शासनों में युगादि, दीवाली, प्लवोत्सव के साथ अध्ययनोत्सव के बारे में भी उललेख रहने के कारण माना जाता है कि इस मंदिर का निर्माण 16 वीं शताब्दी में हुआ।

सुन्दरराज स्वामी का मंदिर 1. महामण्डप, 2. मुख मण्डप, 3. अन्तराल 4. गर्भालय, इस प्रकार चार भागों में निर्मित है।

यह मंदिर सुसज्जित ऊँची शिला पर निर्मित है। इसकी ऊपरी हिस्सा पद्मपट्टिका, त्रिपट्टिका, गलपट्टिका नामक तीन भागों में विभाजित है। यही नहीं ये कपोत नासिका समान, आलिग पट्टिका से अलंकृत है। दीवारों की अंदरुनी हिस्सों में क्रमशः दो स्तंभ, कुम्भपिंजरा, दो दीवारों के खम्भे, कुंभपिंजरा, एक कुइलस्तंभ शलकोष्ठ, एक कुण्ड्य स्तंभ, कुभपिंजरा, दो कुण्ड्य स्तंभ, कुभपिंजरा और दो कुण्ड्यस्तंभों से अलंकृत है। अंतराल दीवारों, दो कुण्ड्यस्तंभ, कुम्भपिंजरा, एक कुण्ड्यस्तंभ शलकोष्ठ, एक कुण्डस्तंभ, कुंभपिजरा और दो कुण्ड्यस्तंभों से अलंकृत है।

इस प्रकार इस मंदिर के दीवार के भीतरी भाग शिल्पविधि के अनुसार सांप्रदायिक वेसरशैली में सुन्दर रूप से निर्मित है।

महामण्डप में चारस्तंभों के क्रम में तीन पंक्तियों और पहली पंक्ति में केवल दो स्तंभों के साथ कुल 14 खम्भे निर्मित हैं। यों सभी स्तंभ विजयनगर पद्धति में निर्मित हैं।

मुखमण्डप साधारण मण्डप के समान ही बनाया गया है। इस मुखमण्डप में अन्तराल के प्रवेश द्वार के दोनों ओर जय और विजय की मूर्त्तियाँ हैं। प्रवेश द्वार के दीवार के दोनों तरफ चार खम्भे बनाये गये हैं।

अन्तराल में गर्भालय के सामने का दीवार, प्रवेश द्वार दोनों कुण्ड्यस्तंभों, कुम्भपंजरों से अलंकृत हैं।

गर्भालय के मध्यभाग में समभंगी मुद्रा में स्थानिक मूर्ति (खडी हुई प्रतिमा) श्रीसुन्दरराज स्वामी की शिलामूर्त्ति प्रतिष्ठित है। ये स्वामी चर्तुभुजी हैं। ऊपरी दोनों हाथों में क्रमशः सुदर्शन चक्र, पांचजन्य शंख, नीचे के दाहिना हाथ वरमुद्रा के साथ, बायाँ हाथ नीचे की ओर है। लगभग आठ कदमों की ऊँचाई के साथ श्रीसुन्दरराज स्वामी के दोनों ओर लम्बी श्रीदेवी, भूदेवी की शिला प्रतिमाएँ प्रतिष्ठित हैं। इन मूलमूर्त्तियों के साथ गर्भालय में तीन फुट ऊँचाई की श्रीदेवी, भूदेवी समेत श्रीसुन्दरराज स्वामी की पंचधातु प्रतिमाएँ शोभायमान हैं। गर्भालय के ऊपर पाँच सोने के कलशों के साथ शिखर निर्मित हैं।

श्री सुन्दरराज स्वामी के सामने महामण्डप के बाहर गरुडमंडप है। इसमें श्री सुन्दरराज स्वामी के सामने अपने खुले पंख गरुड की शिलामूर्त्ति प्रतिष्ठित है। गरुड की प्रतिमा जाँच कर देखें तो पता लगता है कि यह मंदिर अति प्राचीन मंदिर है।

पांचरात्रागम के शास्त्रोक्त विधि विधान में श्रीवैष्णव अर्चकों के द्वारा पूजादि श्रीसुन्दरराजस्वामी का दिन में तीन बार निवेदन किया जाता है। निवेदन के सभी अन्न प्रसाद (नैवेद्य) श्री पद्मावती माता के मंदिर के रसोईघर से ही भेजे जाते हैं।

हर महीने सुन्दरराज स्वामी के अवतार नक्षत्र उत्तराभाद्रा नक्षत्र के दिन श्रीसुन्दरराजस्वामी की उत्सव मूर्त्तियों के अभिषेकादि निवेदन करने के पश्चात् संध्या समय को तिरुचानूर में ग्रामोत्सव मनाया जाता है।

हर वर्ष जेठ के महीने में, पूर्णिमा के पहले पाँच दिनों में तिरुचानूर पद्मसरोवर में माँ पद्मावती का प्लवोत्सव चलता है। उसी के अन्तर्गत दूसरे दिन शाम को श्रीदेवी, भूदेव के साथ श्रीसुन्दराजस्वामी की उत्सव प्रतिमाओं का पद्मसरोवर में धूमधाम से प्लवोत्सव आयोजित होता है।

हर साल जेठ के महीने में श्रीसुन्दरराजस्वामी के अवतार नक्षत्र, उत्तराभाद्रा के दिन के तीन दिन पहले श्रीसुन्दरराजस्वामी के बार्षिक अवतारोत्सव धूमधाम से मनाया जाता है। इन तीनों दिनों तक श्रीसुन्दरराजस्वामी की मूलमूर्त्ति, उत्सव मूर्त्तियों के लिए अभिषेक अर्चनादि निवेदन करते हैं। हर दिन संध्या के समय हर एक वाहन में श्रीस्वामी की शोभायात्रा की जाती है।

लगभग सौ वर्ष पहले यानि ई. के 1906 में उस समय के तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् के महंतों के शासन में मुख्य रूप से महन्त प्रयागदास जी के निर्देशन में श्रीसुन्दरराजस्वामी के गर्भालय, शिखर का पुनरुत्थान, शिखर पर स्वर्ण कलश प्रतिष्ठा, मंदिर का महा कुम्भाभिषेक महोत्सव आदि आयोजित किये गये। उस दिन से श्रीसुन्दरराजस्वामी के अवतार महोत्सव के नाम पर हर साल तीन दिनों तक धूमधाम से ये उत्सव चलाये जाते हैं। 2006 के ज्येष्ठ मास में भी महा अवतारोत्सव अत्यंत वैभव के साथ आयोजित किया गया।

देवियों के साथ, शंखचक्र, वरदहस्त से, ललाट पर वेङ्कटेश्वर के समान ही बडे तिलक धारण कर सदा हँसी बिखेरते हुए सार्थक नामधारी, महा सौन्दर्य के साथ दर्शन देते हुए श्रीसुन्दरराजस्वामी का दर्शन भक्तगण के लिए सर्वश्रेयोदायक, सर्व कल्याणकारक है।

नम : सकल कल्याण कारिणे करुणात्मने
श्रीवत्स वक्षसे तस्मै लक्ष्मी नारायणात्मने!!

* * *

समर्पण
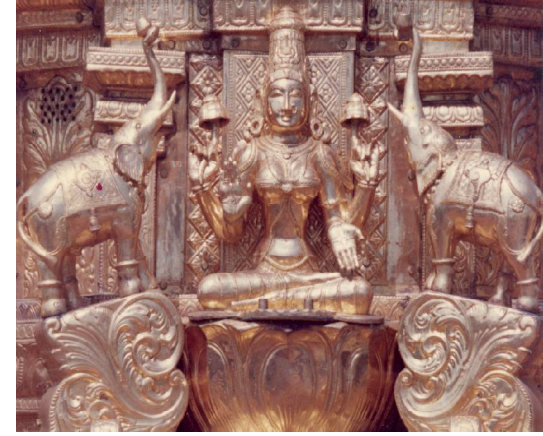
एक ही काल में, उधर तिरुमल के ''आनंदनिलय'' में
श्रीनिवास के वक्षःस्थल में
''व्यूह लक्ष्मी'' समान
इधर तिरुचानूर ''शान्तिनिलय'' में अर्चामूर्त्ति के रूप में
''अलमेलुमंगा'' समान

भासित

श्रीनिवास परमात्मा की हृदय साम्राज्ञी
श्री पद्मावती माता के दिव्यपाद पद्मों पर
समर्पित ये अक्षर कुसुम!

यह

''तिरुचानूर क्षेत्र''
ऊँ श्रीपद्मावत्यै नमः